सत्यमेव जयते

न्यायालय

सहायक कलक्टर/उपखण्ड अधिकारी

गुढामालानी–बाड़मेर

(पीठासीन अधिकारी –केशव कुमार मीना आर.ए.एस.)

वाद संख्याः– 2010/00019 दर्ज तिथिः– 09.09.2010

1. मोहनलाल पुत्र श्री तेजाराम जाति विश्नोई निवासी आलपुरा तहसील गुड़ामालानी जिला बाड़मेर।

............................वादी

बनाम

1. तेजाराम पुत्र श्री आदूराम
2. लाधुराम पुत्र तेजाराम फोत के कायम मुकाम
   2/1 श्रवण पुत्र श्री लाधूराम
   2/2 कालूराम पुत्र श्री लाधूराम
   2/3 दिनेश पुत्र श्री लाधूराम
   2/4 श्रीमती राजीदेवी पत्नी श्री लाधूराम
3. भाखराराम पुत्र श्री तेजाराम
4. गंगाराम पुत्र श्री तेजाराम
5. श्रीमती शान्तिदेवी पत्नी श्री गंगाराम
   कौम विश्नोई निवासी आलपूरा तहसील गुड़ामालानी जिला बाड़मेर।
6. किशनाराम पुत्र जेताराम
7. पांचाराम पुत्र रामकेनराम फौत के कायम मुकाम
   7/1 मांगीलाल पुत्र पांचाराम
   7/2 अशोक पुत्र पांचाराम
   7/3 चूंकीदेवी पत्नी पांचाराम
   7/4 प्रमेश्वरी पत्नी पांचाराम
   कौम विश्नोई निवासी गुड़ामालानी
8. हुकमाराम पुत्र पोकरराम
   कौम विश्नोई निवासी आलपुरा तहसील गुड़ामालानी जिला बाड़मेर।
9. लाधूराम पुत्र हीराराम
   कौम विश्नोई निवासी गांवड़ी तहसील बागोड़ा जिला जालौर।
10. राजस्थान सरकार जरिये तहसीलदार गुडामालानी
11. शाखा प्रबंधक एसबीआई बैक कृषि विस्तार शाखा गुड़ामालानी।

..........................प्रतिवादी

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

उपस्थित अधिवक्ता
वादीः— श्री पूनमाराम विश्नोई
प्रतिवादीः—श्री रामजीवन विश्नोई

राजस्व वाद अन्तर्गत धारा—88, 188
राजस्थान काश्तकारी अधि0—1955

—:निर्णयः—

निर्णय दिनांकः—09.06.2025

1. आज यह पत्रावली दावा बाबत् इस्तकराहक्क अन्तर्गत धारा—88, 188 राजस्थान काश्तकारी अधिनियम—1955 का वास्ते निर्णय हेतु पेश हुई। हस्तगत वाद पत्र निणर्यन हेतु प्रकरण का सारतः सूक्ष्म विवरण इस प्रकार से हैः—
   - कि आराजी खसरा संख्या 188/2 रकबा 04 बीघा मौजा आलपुरा तहसील गुड़ामालानी में वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 —04 के पूर्वज आदू पुत्र भूपा के समय की खातेदारी आराजी दर्ज रिकार्ड है।
   - कि वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 का पारिवारिक सजरा निम्न प्रकार है—

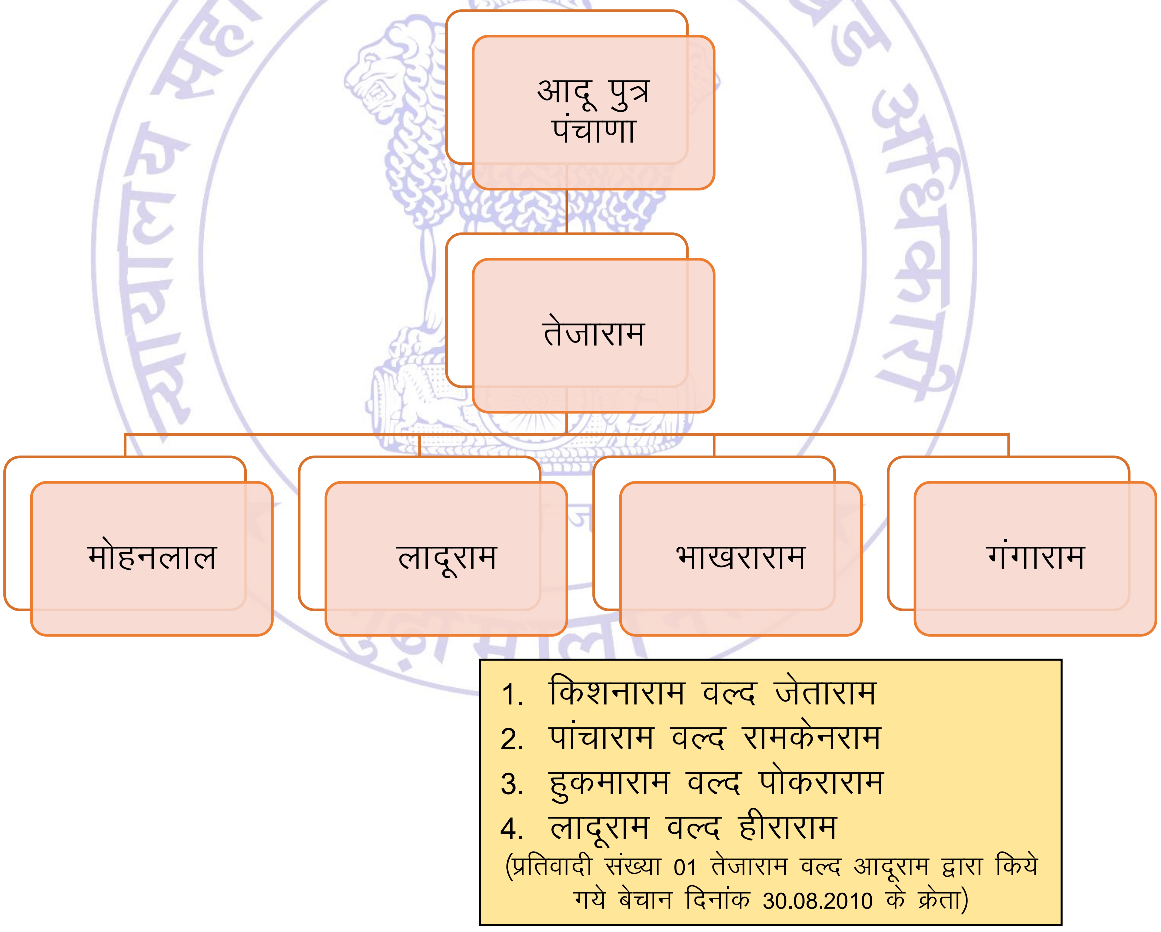

   - वादी एवं प्रतिवादी संख्या 02—05 असल में प्रतिवादी संख्या 01 के जाइन्दा पुत्र व पौत्र है। हिन्दू होने के कारण हिन्दू उतराधिकार अधिनियम—1956 से शासित होते है।

Signature Not Verified

Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

- कि मुतनाजा आराजी खसरा संख्या 188/2 रकबा 04 बीघा मौजा आलपुरा तहसील गुड़ामालानी वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 के पूर्वज आदू पुत्र पंचाणा के नाम दर्ज रिकॉर्ड थी। तत्पश्चात आदू पुत्र पंचाणा के फौत होने पर विरासत में उक्त सजरा अनुसार पुत्रों के नाम दर्ज रिकॉर्ड हुई। इस प्रकार वर्तमान में प्रतिवादी संख्या 01 के नाम उक्त आराजी दर्ज रिकॉर्ड है।
- कि वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 अपने पूर्वज तेजा पुत्र आदू के वारिस होने के कारण अपने पिता तेजा के साथ सहदायिकी तथा संयुक्त हिन्दू परिवार के सदस्य होने के कारण उक्त आराजी में जन्म से ही हक निहित होने के कारण अधिकार रखते है। इस स्थिति में उक्त आराजी में प्रतिवादी संख्या 01 तेजा पुत्र आदू के हिस्से में वादी का 1/5 तथा प्रतिवादी संख्या 01—04 प्रत्येक का 1/5—1/5 हिस्सा कानूनन निहित है। उक्त हिस्सा अनुसार वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 का मौके पर कब्जा काश्त जारी है।
- कि उक्त आराजी में प्रतिवादी संख्या 01 को बिना विभाजन, बिना सहदायकों की सहमति के बयनामा दिनांक 30.08.2010 द्वारा प्रतिवादी संख्या 06—09 के पक्ष में बयनामा निष्पादित करवाने का अधिकार नहीं था। उक्त बयनामा दिनांक 30.08.2010 में वादी के पक्षकार नहीं होने के कारण वादी उक्त बयनामा दिनांक 30.08.2010 से पाबंद व जिम्मेदार नहीं है। इस कारण वादी उक्त विवादित बयनामा दिनांक 30.08.2010 को आरंभ से शून्य, अवैध व निष्प्रभावी घोषित करवाने के अधिकारी है। इस आधार पर वादी अपने हिस्से की पैतृक भूमि में घोषणा करवाने के अधिकारी है।
- कि प्रतिवादी संख्या 06—09 एक अजनबी क्रेता है। इस प्रकार प्रतिवादी संख्या 06—09 के एक अजनबी क्रेता होने के कारण उक्त आराजी पर कब्जा करने हेतू आमदा है। उक्त आराजी पर वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 का कब्जा है। एक सहदायक का कब्जा सभी सहदायकों का कब्जा माना जाता है। इस आधार पर प्रतिवादी संख्या 06—09 के विरूद्ध वादी स्थायी निषेधाज्ञा प्राप्त करने के अधिकारी है।
- कि उक्त आराजी में प्रतिवादी संख्या 01 को बिना विभाजन, बिना सहदायकों की सहमति के बयनामा दिनांक 30.08.2010 द्वारा प्रतिवादी संख्या 06—09 के पक्ष में बयनामा निष्पादित करवाने का अधिकार नहीं था। इस कारण प्रतिवादी संख्या 06—09 एक अजनबी क्रेता है। इस प्रकार प्रतिवादी संख्या 06—09 के एक अजनबी क्रेता होने के कारण उक्त आराजी पर कब्जा करने हेतु आमादा है। इस प्रकार वादी को उक्त दावा हेतु बिनायदावा उत्पन्न हुआ है।
- कि वादी के उक्त आधारों पर निम्न अनुतोष निवेदित हैः—
    1. उक्त मुतनाजा आराजी खसरा संख्या 188/2 रकबा 04 बीघा मौजा आलपुरा तहसील गुड़ामालानी में वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 का प्रत्येक का 1/5—1/5 हिस्सा घोषित किया जाकर सहखातेदार घोषित किया जावे।
    2. प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा प्रतिवादी संख्या 06—09 के पक्ष में निष्पादित बयनामा दिनांक 30.08.2010 वादी के अधिकारों के प्रति आरंभ से शून्य, अवैध व निष्प्रभावी घोषित किया जावे।
    3. वादी के पक्ष में एवं प्रतिवादी के विरूद्ध स्थाई निषेधाज्ञा जारी की जावे।
    4. अन्य अनुतोष।

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

2. वाद पत्र दर्ज रजिस्टर किया जाकर प्रतिवादी को जरिये सम्मन तलब किया गया। प्रकरण में प्रतिवादी संख्या 06—07 ने वादी के दावा का खंडन करते हुए जवाबदावा पेश कर निम्न प्रकार निवेदन कियाः—

- कि मुतनाजा आराजी पैतृक संपति नहीं होकर प्रतिवादी संख्या 01 की पृथक खातेदारी आराजी थी। उक्त मुतनाजा आराजी पर प्रतिवादी संख्या 01 का ही कब्जा काश्त है तथा प्रतिवादी संख्या 02—05 व वादी की कोई कब्जा काश्त नहीं है। उक्त आराजी का प्रतिवादी संख्या 01 ने दिनांक 30.08.2010 को अपनी स्वेच्छा से प्रतिवादी संख्या 06—09 से प्रतिफल प्राप्त कर पंजीबद्ध बयनामा द्वारा बेचान किया गया है। बेचान के समय ही उक्त आराजी का प्रतिवादी संख्या 06—09 को मौके पर कब्जा सुपुर्द कर दिया है। तत्समय से ही प्रतिवादी संख्या 06—09 उक्त आराजी पर आदिनांक तक मौके पर काबिज काश्त है।
- कि उक्त बेचान जानकारी वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 को बेचान के समय से ही है। साथ ही अन्य खसरों से संबंधित दावा वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 द्वारा जरिए राजीनामा प्रत्याहारित किया गया था। इस कारण प्रतिवादी संख्या 06—07 के विरूद्ध पंजीबद्ध बयनामा को शून्य व निष्प्रभावी घोषित करवाने का हस्तगत दावा काबिल—ए—खारिज है। साथ ही अन्य खसरों से संबंधित दावा वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 द्वारा जरिए राजीनामा प्रत्याहारित करने के कारण हस्तगत दावा काबिल—ए—खारिज है।
- कि मुतनाजा आराजी खसरा संख्या 188/2 रकबा 04 बीघा मौजा आलपुरा तहसील गुड़ामालानी के मूल खातेदार अणदाराम की मृत्यु के समय वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 का जन्म ही नहीं हुआ था। इसलिए वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 अणदाराम सहदायिकी के सदस्य नहीं है।
- कि उक्त आराजी का प्रतिवादी संख्या 01 ने दिनांक 30.08.2010 को अपनी स्वेच्छा से प्रतिवादी संख्या 06—09 से पूर्ण प्रतिफल प्राप्त कर पंजीबद्ध बयनामा द्वारा बेचान किया गया है। बेचान के समय ही उक्त आराजी का प्रतिवादी संख्या 06—09 को मौके पर कब्जा सुपुर्द कर दिया है। उक्त मुतनाजा आराजी को बेचने का पूर्ण अधिकार प्रतिवादी संख्या 01 को प्राप्त था। इस कारण हस्तगत दावा काबिल—ए—खारिज है।
- कि वादी द्वारा प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा प्रतिवादी संख्या 06—09 को उक्त आराजी का विधिसम्मत बेचान को आरंभ से शून्य, अवैध व निष्प्रभावी घोषित करवाने का अनुतोष चाहा गया है। विवादित बेचान बाबत् उक्त अनुतोष पर सिर्फ दीवानी न्यायालय को सुनवाई का क्षेत्राधिकार प्राप्त है। साथ ही प्रकरण में राजीनामा प्रार्थना—पत्र दिनांक 17.12.2018 के आधार पर हस्तगत दावा में संशोधन किए जाने से वादी का अनुतोष शून्यकरणीय हो जाने के कारण इस बाबत् राजस्व न्यायालय को सुनवाई का क्षेत्राधिकार व अधिकारिता नहीं है।
- कि वादी ने प्रतिवादी संख्या 01 की संपूर्ण जोत का दावा पेश किया था। तत्पश्चात वादी व प्रतिवादी संख्या 06—09 के मध्य राजीनामा हो जाने पर खसरा संख्या 188/2 रकबा 04 बीघा मौजा आलपुरा के अतिरिक्त अन्य खसरों का विवाद प्रत्याहारित कर लिया गया। इस प्रकार हस्तगत दावे में संशोधन किए जाने से दावा की प्रकृति में आमूलचूल परिवर्तन होने से वादकारण समाप्त हो जाने के कारण हस्तगत दावा काबिल—ए—खारिज है।

Signature Not Verified

Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

- इस प्रकार वादी को इस दावा के जरिये किसी भी प्रकार के विधिक अनुतोष या किसी अन्य प्रकार का अनुतोष प्राप्त करने की अधिकारिता नहीं है। ऐसी स्थिति में वादी का दावा काबिल—ए—खारिज है।

3. प्रकरण में तनकियात कायम किए गए। प्रकरण में वादी के वादपत्र एवं प्रतिवादी के जबाबदावा के अवलोकन पश्चात उभयपक्षकारों के मध्य विवाद के मुख्य बिन्दु निर्धारित करने हेतु निम्न प्रकार तनकीयात कायम किये गयेः—

   1. *आया वादी ग्राम आलपुरा के खेता खसरासंख्या 188/2 रकबा 4—00 बीघा की भूमि में प्रतिवादी संख्या 01 के साथ वादी व प्रतिवादी संख्या 2, 3, 4 को बहिस्सा बराबर 1/5—1/5 हिस्से का खातेदार पैतृक संपदा में घोषित करवाने का अधिकारी है?*
   ....वादी

   2. *आया प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा दिनांक 30.08.2010 को किये गये बेचान बहक प्रतिवादी संख्या 06 से 9 जो उसके हिस्से से अधिक सीमा तक प्रभावहीन व शून्य घोषित करवाने का अधिकारी है।*
   ....वादी

   3. *आया वादी ग्राम आलपुरा के खेत खसरा संख्या 188/2 रकबा 0 4—00 बीघा की भूमि में 1/5 हिस्से की खातेदारी घोषणा के बाद विभाजन की डिक्री से पृथक कराकर कब्जा प्राप्त करने का अधिकारी है।*
   ....वादी

   4. *आया वादी उपरोक्तानुसार बाद घोषणा व बंटवाडा विरूद्ध विप्रार्थीगण स्थाई निषेधाज्ञा पाने का अधिकारी है।*
   ....वादी

   5. *आया ग्राम आलपुरा के खेत खसरा संख्या 188/2 रकबा 4—00 बीघा की भूमि प्रतिवादी संख्या 01 के स्वामित्व की थी जिसे प्रतिवादी संख्या 01 ने दिनांक 30.08.2010 को अपनी स्वेच्छा से प्रतिवादी संख्या 06 ता 09 को प्रतिफल प्राप्त कर पंजीबद्ध दस्तावेज से बेचान कर कब्जा प्रतिवादी संख्या 06 ता 09 को सुपुर्द कर दिया गया है, बेचान निष्प्रभावी सिविल न्यायालय ही कर सकता है। उक्त आराजी पर वादी व प्रतिवादी संख्या 02 से 05 का इस भूमि में किसी प्रकार का कोई हक अधिकार नहीं होने व वादी का वाद मनगढन्त तथ्यों पर आधारित एवं राजस्व न्यायालय के क्षेत्राधिकार का नहीं होने से खारिज करवाने के अधिकारी है?*
   ....प्रतिवादी

   6. *अन्य दादरसी*
   .... उभय—पक्षकारान

4. प्रकरण में उक्त प्रकार से कार्यवाही किये जाने पर विचारण आरम्भ किया गया। प्रकरण में वादी द्वारा साक्ष्य स्वरूप निम्न दस्तावेज प्रस्तुत कर प्रदर्श अंकित किए—

संवत/विवरण	प्रदर्श
नकल जमाबंदी संवत 2066—68 खाता संख्या 52 मौजा सीलू	प्रदर्श—पी01
नक्शा ट्रेश खसरा संख्या 4/1, 4/5, 68/4 मौजा सीलू	प्रदर्श—पी02

Signature Not Verified

Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

नक्शा ट्रेश खसरा संख्या 188, 188/2 मौजा आलपुरा	प्रदर्श—पी03
नकल जमाबंदी संवत 2066—68 खाता संख्या 39, 40 मौजा सीलू	प्रदर्श—पी04
नकल जमाबंदी संवत 2064—67 खाता संख्या 87 मौजा सीलू	प्रदर्श—पी05
नकल जमाबंदी संवत 2029—32 खाता संख्या 02 मौजा सीलू	प्रदर्श—पी06
नकल जमाबंदी संवत 2029—32 खाता संख्या 03 मौजा आलपुरा	प्रदर्श—पी07
बेचाननामा दिनांक 30.08.2010	प्रदर्श—पी08

5. प्रकरण में वादी द्वारा साक्ष्य स्वरूप निम्न गवाह प्रस्तुत किए—

नाम	जाति	निवासी	गवाह
मोहनलाल पुत्र तेजाराम	विश्नोई	आलपुरा	पी0डब्ल्यू—1
सुखराम पुत्र हीराराम	विश्नोई	सीलू	पी0डब्ल्यू—2

6. प्रकरण में मोहनलाल पुत्र तेजाराम पी0डब्ल्यू—01, सुखराम पुत्र हीराराम पी0डब्ल्यू—02 द्वारा हलफनामा प्रस्तुत कर समान रूप से निम्न प्रकार कथन किये—

- वादी एवं प्रतिवादी संख्या 02—05 असल में प्रतिवादी संख्या 01 के जाइन्दा पुत्र व पौत्र है। हिन्दू होने के कारण हिन्दू उतराधिकार अधिनियम—1956 से शासित होते है।
- कि मुतनाजा आराजी खसरा संख्या 188/2 रकबा 04 बीघा मौजा आलपुरा तहसील गुड़ामालानी वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 के पूर्वज आदू पुत्र पंचाणा के नाम दर्ज रिकॉर्ड थी। तत्पश्चात आदू पुत्र पंचाणा के फौत होने पर विरासत में उक्त सजरा अनुसार पुत्रों के नाम दर्ज रिकॉर्ड हुई। इस प्रकार वर्तमान में प्रतिवादी संख्या 01 के नाम उक्त आराजी दर्ज रिकॉर्ड है।
- कि वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 अपने पूर्वज तेजा पुत्र आदू के वारिस होने के कारण अपने पिता तेजा के साथ सहदायिकी तथा संयुक्त हिन्दू परिवार के सदस्य होने के कारण उक्त आराजी में जन्म से ही हक निहित होने के कारण अधिकार रखते है। इस स्थिति में उक्त आराजी में प्रतिवादी संख्या 01 तेजा पुत्र आदू के हिस्से में वादी का 1/5 तथा प्रतिवादी संख्या 01—04 प्रत्येक का 1/5—1/5 हिस्सा कानूनन निहित है। उक्त हिस्सा अनुसार वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 का मौके पर कब्जा काश्त जारी है।
- कि उक्त आराजी में प्रतिवादी संख्या 01 को बिना विभाजन, बिना सहदायकों की सहमति के बयनामा दिनांक 30.08.2010 द्वारा प्रतिवादी संख्या 06—09 के पक्ष में बयनामा निष्पादित करवाने का अधिकार नहीं था। उक्त बयनामा दिनांक 30.08.2010 में वादी के पक्षकार नहीं होने के कारण वादी उक्त बयनामा दिनांक 30.08.2010 से पाबंद व जिम्मेदार नहीं है। इस कारण वादी उक्त विवादित बयनामा दिनांक 30.08.2010 को आरंभ से शून्य, अवैध व निष्प्रभावी घोषित करवाने के अधिकारी है। इस आधार पर वादी अपने हिस्से की पैतृक भूमि में घोषणा करवाने के अधिकारी है।
- कि प्रतिवादी संख्या 06—09 एक अजनबी क्रेता है। इस प्रकार प्रतिवादी संख्या 06—09 के एक अजनबी क्रेता होने के कारण उक्त आराजी पर कब्जा करने हेतू आमदा है। उक्त आराजी पर वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 का कब्जा है। एक सहदायक का कब्जा सभी सहदायकों का कब्जा माना जाता

Signature Not Verified

Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

है। इस आधार पर प्रतिवादी संख्या 06–09 के विरूद्ध वादी स्थायी निषेधाज्ञा प्राप्त करने के अधिकारी है।

- इसके समर्थन में वादी द्वारा पैरा–04 मे अंकित दस्तावेज प्रदर्श करवाएं हैं।

7. प्रकरण में मोहनलाल पुत्र तेजाराम पी0डब्ल्यू–01 ने दौराने प्रतिपरीक्षण अभिकथन किए कि यह कहना सही है कि मेरा नाम खातेदारी में नहीं है। मेरे पिता तेजा तेजाराम को फोत हुए 5–6 वर्ष हो गए हैं। यह कहना सही है कि मेरे पिता तेजा ने अपने जीवन काल में बेचान किया है। यह कहना सही है कि मेरे व प्रतिवादी संख्या 7 से 9 के मध्य राजीनामा हो गया। अज खुद कहा कि उन्होंने जमीन वापस दे दी। यह कहना गलत है कि प्रतिवादी गण ने मुझे से वापस देने कि एवज में प्रतिफल लिया हो। यह कहना सही है कि वक्त वाद पेश इस खसरे के अलावा और भी खसरों का मैने वाद पेश किया था। यह कहना सही है कि बाकी खसरों के संबंध में अनुतोष का वाद मैने वापस ले लिया। यह कहना सही है कि वाद ग्रस्त जमीन मेगा हाईवे पर आई हुई है।यह कहना सही है कि हुकमाराम प्रतिवादी संख्या 8 ने राजीनामा मुझे लिख कर दिया था और वह पत्रावली मैने कोर्ट में पेश कर दी। शपथ पत्र मैने हस्ताक्षर करके दिए थे। यह कहना सही है कि मेरे पिता तेजा तेजाराम की उम्र 82–83 वर्ष थी। यह कहना गलत है कि तेजाराम कभी बीमार नहीं पढ़ा हो। मेरे दादा का नाम आदूराम था। यह कहना सही है कि मेरे दादा फोत हुए तब यह जमीन मेरे पिता तेजा के नाम से नामांतरण भरा गया था। यह कहना गलत है कि मेरे पिता तेजा तेजाराम ने जमीन का बेचान किया था लेकिन जमीन कीमती होने से वापस लेने के लिए यह दावा पेश किया हुआ हो।

8. प्रकरण में सुखराम पुत्र हीराराम पी0डब्ल्यू–02 ने दौराने प्रतिपरीक्षण अभिकथन किए कि यह कहना सही है कि मेरे भाईयों में मै सबसे बडा हूं। मेरे पिता तेजाजी 7 भाई थे। यह कहना सही है कि मेरे काका तेजाराम के भाई अलग अलग रहते थे। हमारे परिवार में मेरे पिता तेजाजी सबसे बडे थे। यह कहना सही है कि तेजाराम के परिवार में कर्ता खानदान तेजाराम ही थे। यह कहना सही है कि तेजाराम के परिवार का लेन देन तेजाराम जी ही करते थे। यह कहना गलत है कि तेजाराम की बेची जमीन को वापस लेने के लिए इस खसरे का झूठा दावा पेश किया गया हो।

9. प्रकरण में प्रतिवादी द्वारा साक्ष्य स्वरूप निम्न दस्तावेज प्रस्तुत कर प्रदर्श अंकित किए–

संवत/विवरण	प्रदर्श
बेचाननामा दिनांक 30.08.2010	प्रदर्श–डी01ए
दानपत्र दिनांक 20.10.2014	प्रदर्श–डी02ए

10. प्रकरण में प्रतिवादी द्वारा साक्ष्य स्वरूप निम्न गवाह प्रस्तुत किए–

नाम	जाति	निवासी	गवाह
किशनाराम पुत्र जेताराम	विश्नोई	गुड़ामालानी	डी0डब्ल्यू–1
मांगीलाल पुत्र पांचाराम	विश्नोई	गुड़ामालानी	डी0डब्ल्यू–2
प्रमेश्वरी पत्नी पाचाराम	विश्नोई	गुड़ामालानी	डी0डब्ल्यू–3
अशोक पुत्र गंगाराम	विश्नोई	गुड़ामालानी	डी0डब्ल्यू–4

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

11. प्रकरण में किशनाराम पुत्र जेताराम डी0डब्ल्यू–01, मांगीलाल पुत्र पांचाराम डी0डब्ल्यू–02, प्रमेश्वरी पत्नी पाचाराम डी0डब्ल्यू–3, अशोक पुत्र गंगाराम डी0डब्ल्यू–4 द्वारा हलफनामा प्रस्तुत कर समान रूप से निम्न प्रकार कथन किये–

- कि मुतनाजा आराजी पैतृक संपति नहीं होकर प्रतिवादी संख्या 01 की पृथक खातेदारी आराजी थी। उक्त मुतनाजा आराजी पर प्रतिवादी संख्या 01 का ही कब्जा काश्त है तथा प्रतिवादी संख्या 02–05 व वादी की कोई कब्जा काश्त नहीं है। उक्त आराजी का प्रतिवादी संख्या 01 ने दिनांक 30.08.2010 को अपनी स्वेच्छा से प्रतिवादी संख्या 06–09 से प्रतिफल प्राप्त कर पंजीबद्ध बयनामा द्वारा बेचान किया गया है। बेचान के समय ही उक्त आराजी का प्रतिवादी संख्या 06–09 को मौके पर कब्जा सुपुर्द कर दिया है। तत्समय से ही प्रतिवादी संख्या 06–09 उक्त आराजी पर आदिनांक तक मौके पर काबिज काश्त है।
- कि उक्त बेचान जानकारी वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01–04 को बेचान के समय से ही है। साथ ही अन्य खसरों से संबंधित दावा वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01–04 द्वारा जरिए राजीनामा प्रत्याहारित किया गया था। इस कारण प्रतिवादी संख्या 06–07 के विरूद्ध पंजीबद्ध बयनामा को शून्य व निष्प्रभावी घोषित करवाने का हस्तगत दावा काबिल–ए–खारिज है। साथ ही अन्य खसरों से संबंधित दावा वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01–04 द्वारा जरिए राजीनामा प्रत्याहारित करने के कारण हस्तगत दावा काबिल–ए–खारिज है।
- कि मुतनाजा आराजी खसरा संख्या 188 / 2 रकबा 04 बीघा मौजा आलपुरा तहसील गुड़ामालानी के मूल खातेदार अणदाराम की मृत्यु के समय वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01–04 का जन्म ही नहीं हुआ था। इसलिए वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01–04 अणदाराम सहदायिकी के सदस्य नहीं है।
- कि उक्त आराजी का प्रतिवादी संख्या 01 ने दिनांक 30.08.2010 को अपनी स्वेच्छा से प्रतिवादी संख्या 06–09 से पूर्ण प्रतिफल प्राप्त कर पंजीबद्ध बयनामा द्वारा बेचान किया गया है। बेचान के समय ही उक्त आराजी का प्रतिवादी संख्या 06–09 को मौके पर कब्जा सुपुर्द कर दिया है। उक्त मुतनाजा आराजी को बेचने का पूर्ण अधिकार प्रतिवादी संख्या 01 को प्राप्त था। इस कारण हस्तगत दावा काबिल–ए–खारिज है।
- कि वादी द्वारा प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा प्रतिवादी संख्या 06–09 को उक्त आराजी का विधिसम्मत बेचान को आरंभ से शून्य, अवैध व निष्प्रभावी घोषित करवाने का अनुतोष चाहा गया है। विवादित बेचान बाबत् उक्त अनुतोष पर सिर्फ दीवानी न्यायालय को सुनवाई का क्षेत्राधिकार प्राप्त है। साथ ही प्रकरण में राजीनामा प्रार्थना–पत्र दिनांक 17.12.2018 के आधार पर हस्तगत दावा में संशोधन किए जाने से वादी का अनुतोष शून्यकरणीय हो जाने के कारण इस बाबत् राजस्व न्यायालय को सुनवाई का क्षेत्राधिकार व अधिकारिता नहीं है।
- कि वादी ने प्रतिवादी संख्या 01 की संपूर्ण जोत का दावा पेश किया था। तत्पश्चात वादी व प्रतिवादी संख्या 06–09 के मध्य राजीनामा हो जाने पर खसरा संख्या 188 / 2 रकबा 04 बीघा मौजा आलपुरा के अतिरिक्त अन्य खसरों का विवाद प्रत्याहारित कर लिया गया। इस प्रकार हस्तगत दावे में संशोधन किए जाने से दावा की प्रकृति में आमूलचूल परिवर्तन होने से वादकारण समाप्त हो जाने के कारण हस्तगत दावा काबिल–ए–खारिज है।

Signature Not Verified

Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

- इस प्रकार वादी को इस दावा के जरिये किसी भी प्रकार के विधिक अनुतोष या किसी अन्य प्रकार का अनुतोष प्राप्त करने की अधिकारिता नहीं है। ऐसी स्थिति में वादी का दावा काबिल—ए—खारिज है।
- इसके समर्थन में प्रतिवादी द्वारा पैरा—09 मे अंकित दस्तावेज प्रदर्श करवाएं हैं।

12. प्रकरण में किशनाराम पुत्र जेताराम डी0डब्ल्यू—1 ने दौराने प्रतिपरीक्षण अभिकथन किए कि यह कहना सही है मैने कोर्ट में गवाह के रूप से शपथ—पत्र पेश किया है जो आज पेश किया है। यह शपथ पत्र मैने बोला था तथा वकील साहब ने लिखा था। शपथ पत्र में क्या लिखा है मुझे पता है। यह मुझे पता नही है कि यह भूमि वक्त सेटलमेंट से तेजाराम के पिता तेजा आदूराम के नाम हुई हो। पैतृक भूमि और स्वअर्जित भूमि क्या होती है मुझे मालूम नहीं है। यह कहना सही है कि पैतृक भूमि में वारिसों का हिस्सा होता है। यह कहना गलत है कि रजिस्ट्री के समय तेजाराम की उम्र 85—90 वर्ष हो। यह कहना गलत है कि रजिस्ट्री के समय तेजाराम की मानसिक हालत सही नहीं हो। यह कहना गलत है कि तेजाराम की मानसिक हालत सही नहीं होने के कारण हमने घर से लाकर गलत रजिस्ट्री करवा ली हो। यह कहना गलत है कि मानसिक हालत का फायदा उठाकर बिना प्रतिफल के रजिस्ट्री करवा ली हो। यह मैने नहीं सुना है कि पंच पंचायती होने कारण खरीददार हुकमाराम व लाधुराम ने जमीन वापस दे दी हो। यह कहना गलत है कि वादग्रस्त भूमि तेजाराम ने अपने जीवनकाल में अपने पुत्रों के आपसी बंटवारा करके वादी मोहनलाल को सुपुर्द की हो। यह कहना गलत है वादग्रस्त भूमि पर कब्जा वादी का हो। वादग्रस्त भूमि के उतर में बुधराम का खेत है दक्षिण में कॉलोनी कटी है। पूर्व में मोहनलाल जी की है। दक्षिण में मेघा हाईवे सड़क है। यह कहना गलत है कि वादग्रस्त भूमि में ईंट का भट्टा चल रहा हो और कब्जा काश्त मोहनलाल का हो। यह कहना गलत है कि आज जो इस फाईल में गवाह पेश कर रहा हूं वो पांचाराम के परिवार के सदस्य हो अजखुदका कहा कि एक पांचाराम का लड़का व एक पांचाराम की पत्नी है तथा गवाह अशोक कुमार बारूड़ी का निवासी है। तथा वादग्रस्त खेत का पड़ौसी है। यह कहना गलत है कि वादग्रस्त जमीन के पड़ौस में अशोक कुमार के नाम की कोई खातेदारी भूमि दर्ज नहीं है। यह कहना सही है कि वादग्रस्त भूमि के पड़ौस में आबादी बसी हुई है। अजखुदकहा कि पश्चिम दिशा में कॉलोनी है। यह कहना गलत है कि वादग्रस्त भूमि के पश्चिम में पांचाराम व अशोक के साझेदारी में कोई मशीनरी स्टोर चलता हो। यह कहना गलत है दुकान में भागीदारी की वजह से अशोक गवाही देने आए हो।

13. प्रकरण में मांगीलाल पुत्र पांचाराम डी0डब्ल्यू—02 ने दौराने प्रतिपरीक्षण अभिकथन किए कि यह कहना सही है कि कोर्ट मै बयान के लिए चार—पांच बार आया हु। तारीख मुझे याद नहीं है। यह कहना सही है कि शपथ—पत्र वकील साहब द्वारा तैयार कर पेश किया गया है। मुझे शथप पत्र मे क्या लिखा है अजखुदका कहा कि जमीन ली हुई है। यह कहना सही है कि यह जमीन मेरे पिता तेजाजी ने खरीद की है। मै मेरे पिता तेजाजी की जमीन में हिस्सा लेने आया हु। यह कहना भी सही है कि पिता तेजाजी की जमीन में उसकी औलाद का बराबर—बराबर हिस्सा होता है। यह कहना गलत है कि मुझे रजिस्ट्री के सबंध में जानकारी हो। यह कहना सही है कि उक्त भूमि सेटलमेंट के समय तेजाराम के पिता तेजा आदुराम के नाम खातेदारी में दर्ज

Signature Not Verified

Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

हुई थी और आदुराम की फौत होने पर तेजाराम के नाम हुई थी । यह कहना गलत है कि वक्त रजिस्ट्री तेजाराम की आयु 85—90 साल की हो। अजखुदका कहा की 50—55 साल थी। पैतृक संपति स्वअर्जित संपति क्या होती है मुझे मालुम नहीं है। वादग्रस्त खेत का खसरा संख्या याद नहीं है। वादग्रस्त भूमि के पड़ौस में पश्चिम दिशा में सड़क आई हुई है। दक्षिण दिशा में कॉलानी आई हुई है। पूर्व में मुख्य सड़क हाईवे है। यह कहना सही है कि मूल खसरा कितना बीघा है यह मुझे मालुम नहीं है अजखुदका कहा कि 1 बीघा मेरे व 1 बीघा 1 किशनाराम जी का है। यह कहना गलत है कि वादग्रस्त भूमि पर वादी का कब्जा हो। यह कहना सही है कि सहदायिकी संपति क्या है मुझे मालूम नहीं है। यह कहना सही है कि आज जो कोर्ट में बयान देने आए है वो एक ही परिवार के सदस्य है। यह मुझे याद नहीं है कि रजिस्ट्री के समय तेजाराम अकेले को हम घर से लाए हो। यह कहना गलत है कि रजिस्ट्री के समय तेजाराम की दिमागी हालत सही नहीं हो। यह कहना गलत है कि तेजाराम को घर से पेशन के साइन करवाने के लिए लाकर रजिस्ट्री करवाई हो। तेजाराम के परिवार को मैं जानता हुं। यह बात सही है कि तेजाराम के लड़के सभी अलग अलग खेत मे अलग—अलग रह रहे है जो सहमति से बंटवारा किया हुआ है। विवादग्रस्त भूमि तेजाराम ने अपने पुत्रों के आपसी बंटवारा कर वादी मोहनलाल को दी गई हो। यह कहना गलत है कि तेजाराम के मानसिक स्थिति का फायदा उठाकर हमने जमीन का प्रतिफल नहीं दिया हो। यह मुझे जानकारी नहीं है कि यह जमीन कुल चार लोगो ने खरीदी हो अजखुदका कहा कि मेरे पिता तेजाजी व किशनाराम व अन्य दो ने खरीदी थी। यह कहना गलत है कि वादग्रस्त भूमि का संपूर्ण खसरा मेरे पिता तेजा व अन्य तीन ने खरीद लिया हो। यह मुझे उक्त भूमि का प्रतिफल नहीं देने की वजह से आपसी राजीनामा से खरीददार हुकमाराम व लाधुराम ने वादी मोहनलाल को वापस सुपुर्द की हो। यह कहना सही है कि गवाह अशोक और मेरे साथ मे मशीनरी पार्ट का धंधा है और बारूड़ी का निवासी है। यह कहना गलत है कि साथ मे धंधा करने की वजह से हमने गवाह बनाया हो। यह कहना गलत है अशोक हमारा पड़ौसी हो।

14. प्रकरण में प्रमेश्वरी पत्नी पाचाराम डी0डब्ल्यू—03 ने दौराने प्रतिपरीक्षण अभिकथन किए कि मेरे आज से पूर्व कोर्ट में कोई बयान नहीं हुए थे। यह कहना सही है कि शपथ पत्र वकील साहब ने पेश किए है। यह कहना सही है कि शपथ पत्र वकील साहब ने लिखवाया है। मेरे से अगुष्ठ करवाए है। यह कहना सही है कि मैं पढी लिखी नहीं हु इसमें जमीन के बारे में लिखा है। यह कहना सही है कि जमीन की रजिस्ट्री तेजाराम ने करवाई थी। रजिस्ट्री मेरे लड़के के काके के नाम करवाई थी। वादग्रस्त भूमि खसरा संख्या की मुझे जानकारी मुझे मालूम नही है दो बीघा है। मेरे तेजाराम को देखा हुआ है। यह कहना सही है कि रजिस्ट्री के समय तेजाराम की उम्र 85—90 साल थी। यह कहना गलत है कि तेजाराम वक्त रजिस्ट्री वृद्व या कमजोर हो। मै पैतृक संपति या स्वअर्जित संपति के बारे में नहीं जानती हु। यह मुझे मालूम नही है कि पिता तेजा की जमीन में वारिसों का हिस्सा हो। वादग्रस्त जमीन के पड़ौसी कौन है मुझे मालूम नहीं है। यह कहना गलत है कि वादग्रस्त भूमि में ईटों की दुकान या वादी का कब्जा हो। यह कहना गलत है कि वादग्रस्त भूमि के चारों ओर आबादी नहीं बसी हो। यह कहना गलत है कि वादग्रस्त भूमि पर मोहनलाल का कब्जा हो यह जमीन हमने पैसे देकर खरीदी है। हमारी जमीन पर हमारा कब्जा है। पास में आधी जमीन पर ईंटों की दुकान है। यह कहना सही है कि रजिस्ट्री के समय मैं साथ में थी। रजिस्ट्री चार जनों के नाम हुई थी। यह कहना सही है दो जनों ने

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

जमीन वापस मोहनलाल को दे दी। यह कहना गलत है कि तेजाराम को पेशन का बोलकर जमीन की रजिस्ट्री कर दी हो। यह कहना सही है कि तेजाराम की जमीन में उनके लड़कों का हक है। मुझे जानकारी नहीं है कि वादग्रस्त भूमि तेजाराम ने अपने पुत्रों के आपसी बंटवारा कर के वादी मोहनलाल को सुपुर्द की हो। यह कहना गलत है कि उक्त भूमि मोहनलाल का कब्जा काश्त हो।

15. प्रकरण में अशोक पुत्र गंगाराम डी0डब्ल्यू—04 ने दौराने प्रतिपरीक्षण अभिकथन किए कि इस वाद के संबंध में मैने 10—15 दिन पहले गवाही दी थी व मौखिक दी थी। शपथ पत्र डीडब्ल्यु 03 वकील साहब ने लिखा व मैने उस पर हस्ताक्षर किए । अजखुदका कहा कि मैने वकील साहब से लिखवाया था। शपथ पत्र मे क्या लिखा है मुझे जानकारी है। मै बारूड़ी का निवासी हु तथा 2008 से यहा गुड़ामालानी में रह रहा हु। मै इस खेत का पड़ौसी नहीं हुं। इस खेत के खसरा संख्या याद नहीं है लेकिन इस खेत मे हम रह रहे है। यह कहना सही है कि मै तेजाराम के लड़को को जानता हु। मोहनजी व तेजाराम जी अलग रह रहे थे। तेजाराम जी ने जमीन बेची। यह कहना गलत है कि वादग्रस्त भूमि में वादी मोहनलाल का कब्जा हो व ईंटों का भट्टा चलता हो। इस खेत के पड़ौस में दक्षिण दिशा में गंगाराम व पूर्व में सड़क आई हुई है। पश्चिम में कॉलोनी है व डेयरी है। उत्तर में गंगाराम है। यह कहना गलत है कि रजिस्ट्री के समय तेजाराम की उम्र ज्यादा होने के कारण दिमागी स्थिति सही नहीं होने पर पेंशन का बोलकर प्रतिवादी ने रजिस्ट्री अपने नाम करवा ली हो। वादग्रस्त भूमि के संबंध में चार लोगो ने जमीन खरीद की थी उसमें से दो बीघा जमीन वापस मोहनलाल को वापस देदी।

16. पत्रावली पर विद्वान अधिवक्ता वादी की बहस सुनी गई। दौराने बहस विद्वान वादी अधिवक्ता द्वारा वाद पत्र में अंकित बिन्दुओं को मात्र दौहराते हुए निवेदन किया कि मुतनाजा आराजी खसरा संख्या 188/2 रकबा 04 बीघा मौजा आलपुरा तहसील गुड़ामालानी में वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 का प्रत्येक का 1/5—1/5 हिस्सा घोषित किया जाकर प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा प्रतिवादी संख्या 06—09 के पक्ष में निष्पादित बयनामा दिनांक 30.08.2010 वादी के अधिकारों के प्रति आरंभ से शून्य, अवैध व निष्प्रभावी घोषित किया जावे। दौराने बहस विद्वान प्रतिवादी अधिवक्ता द्वारा वाद पत्र में अंकित बिन्दुओं को मात्र दौहराते हुए निवेदन किया कि वादी को इस दावा के जरिये किसी भी प्रकार के विधिक अनुतोष या किसी अन्य प्रकार का अनुतोष प्राप्त करने की अधिकारिता नहीं है। ऐसी स्थिति में वादी का दावा काबिल—ए—खारिज है।

17. मैनें विद्वान अधिवक्ता वादी की बहस पर मनन किया गया एवं पत्रावली पर संलग्न दस्तावेजात् का ध्यानपूर्वक अवलोकन किया गया। प्रकरण में तनकीवार विश्लेषण किया जाना अपेक्षित है। इस कारण प्रकरण में तनकी संख्या 01 व 02 का विश्लेषण किया जाना अपेक्षित है। प्रकरण में तनकी संख्या 01 व 02 निम्न प्रकार हैंः—

1. *आया वादी ग्राम आलपुरा के खेता खसरासंख्या 188/2 रकबा 4—00 बीघा की भूमि में प्रतिवादी संख्या 01 के साथ वादी व प्रतिवादी संख्या 2, 3, 4 को बहिस्सा बराबर 1/5—1/5 हिस्से का खातेदार पैतृक संपदा में घोषित करवाने का अधिकारी है?*

..................................वादी

Signature Not Verified

Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

2. *आया प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा दिनांक 30.08.2010 को किये गये बेचान बहक प्रतिवादी संख्या 06 से 9 जो उसके हिस्से से अधिक सीमा तक प्रभावहीन व शून्य घोषित करवाने का अधिकारी है।*

.................................वादी

18. प्रकरण में तनकी संख्या 01 व 02 को साबित करने का भार वादी के उपर है। प्रकरण का अवलोकन करने पर प्रतीत होता है कि तनकी संख्या 01 व 02 सारतः हिन्दू उतराधिकार अधिनियम–1955 की धारा–06 से संबंधित है। उक्त तनकी संख्या 01 व 02 के अवलोकन से अनुतोष में समाहित अनेक पक्ष व बिंदु सामने आते है। अतः उक्त अनुतोष का निर्णयन किये जाने से पूर्व अनुतोष में समाहित अनेक निम्न पक्ष व बिंदुओं का निर्धारण किया जाना अपेक्षित हैः–

1. *वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01–04 का हिन्दू संयुक्त परिवार के सदस्य होना।*
2. *मुतनाजा आराजी का पैतृक संपति होना।*
3. *वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01–04 का पैतृक आराजी में हिन्दू उतराधिकार अधिनियम–1955 की धारा–06 के तहत सहदायक होना।*
4. *वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01–04 का पैतृक आराजी में हिन्दू उतराधिकार अधिनियम–1955 की धारा–06 के तहत सहदायक होने के आधार पर अधिकार निहित होना।*
5. *प्रतिवादी संख्या 01 का अपने परिवार के कर्ता/मुखिया होना।*
6. *प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा बेचान दिनांक* 30.08.2010 *विधिक आवश्यकताओं के लिए किया गया होना।*

19. प्रकरण में प्रथम अनुतोष के विश्लेषण से पूर्व हिन्दू उतराधिकार से संबंधित संकल्पनाओं व कानून के निम्न बिंदुओं का विश्लेषण किया जाना अपेक्षित हैः–

1. *हिन्दू संयुक्त परिवार एवं संपति की संकल्पना/अवधारणा।*
2. *पैतृक संपति की संकल्पना/अवधारणा।*
3. *सहदायिकी एवं सहदायिकी संपति की संकल्पना/अवधारणा।*
4. *सहदायिकी संपति में सहदायक के अधिकार की संकल्पना/अवधारणा।*
5. *हिन्दू संयुक्त परिवार के कर्ता/मुखिया की संकल्पना/अवधारणा।*
6. *हिन्दू संयुक्त परिवार के कर्ता/मुखिया के प्राधिकार की संकल्पना/अवधारणा।*
7. *हिन्दू संयुक्त परिवार के कर्ता/मुखिया की सहदायिकी संपति के अंतरण की संकल्पना/अवधारणा।*
8. *सहदायिकी संपति के अंतरण हेतु आवश्यक परिस्थितियों की संकल्पना/अवधारणा।*
9. *हिन्दू संयुक्त परिवार के कर्ता/मुखिया की सहदायिकी संपति के अंतरण किये जाने पर क्रेता के कर्तव्य की संकल्पना/अवधारणा।*

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

10. *हिन्दू संयुक्त परिवार के कर्ता/मुखिया की सहदायिकी संपति के अंतरण के विरूद्ध सहदायक को उपलब्ध विकल्प/उपचार की संकल्पना/अवधारणा।*

20. प्रकरण में सर्वप्रथम हिन्दू विधि के तहत सर्वप्रथम हिन्दू संयुक्त परिवार एवं हिन्दू संयुक्त परिवार द्वारा धारित संपति की संकल्पना/अवधारणा के संबंध में कानून/विधि की स्थिति को समझना अपरिहार्य है। हिन्दू संयुक्त परिवार एवं हिन्दू संयुक्त परिवार द्वारा धारित संपति की संकल्पना/अवधारणा के निम्न आवश्यक अवयव हैः—

1. *हिन्दू विधि में संयुक्त हिन्दू परिवार में सभी परिवार के सदस्य का एक पुरूष पूर्वज होना आवश्यक है।*
2. *हिन्दू विधि में संयुक्त हिन्दू परिवार में सभी पुरूष, उनकी पत्नियां, माताएं एवं अविवाहित पुत्री शामिल होती है।*
3. *हिन्दू विधि में संयुक्त हिन्दू परिवार में शामिल अविवाहित पुत्री का विवाह होते ही वह पति के संयुक्त हिन्दू परिवार का सदस्य बनकर शामिल हो जाती है तथा पिता तेजा के संयुक्त हिन्दू परिवार से अलग हो जाती है।*
4. *हिन्दू विधि में बिना संयुक्त हिन्दू परिवार की संपति के भी संयुक्त हिन्दू परिवार अस्तित्व में आ सकता है।*
5. *हिन्दू विधि में संयुक्त हिन्दू परिवार के सदस्य एक दुसरे से रिश्ते के आधार पर एकता में बंधे रहते है।*
6. *हिन्दू विधि में संयुक्त हिन्दू परिवार के सदस्य एक दुसरे से रिश्ते के साथ—साथ भोजन एवं पूजा में भी एकता में बंधे रहते है।*
7. *हिन्दू विधि में संयुक्त हिन्दू परिवार विधि द्वारा सृजित ईकाई है। किन्ही सदस्यों के द्वारा आपस में संयुक्त हिन्दू परिवार का सृजन नहीं किया जा सकता है।*
8. *हिन्दू विधि में संयुक्त हिन्दू परिवार में गोद द्वारा नये सदस्य जोड़े जा सकते है।*
9. *हिन्दू विधि में संयुक्त हिन्दू परिवार में किसी पुरूष सदस्य के नहीं होने की स्थिति में परिवार के अंत को रोकने हेतु गोद द्वारा नये सदस्य जोड़कर परिवार को आगे बढाया जा सकता है।*
10. *हिन्दू विधि में संयुक्त हिन्दू परिवार की संपति पर एक का कब्जा सभी का कब्जा माना जाता है। इस प्रकार हिन्दू संयुक्त परिवार में संपति पर कब्जे के आधार पर एकता रहती है।*
11. *हिन्दू विधि में संयुक्त हिन्दू परिवार की संपति में से कोई सदस्य कभी भी विभाजन करवाकर पृथक हो सकता है। इस प्रकार सदस्य के पृथक होने पर वह संपति संयुक्त हिन्दू परिवार की नहीं रहती है।*
12. *एक वृहत हिन्दू संयुक्त परिवार ईकाई में अनेक छोटी—छोटी हिन्दू संयुक्त परिवार की लघुतर ईकाई समाहित हो सकती है। जिनका पृथक अस्तित्व नहीं होता है परंतु छोटी—छोटी*

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

हिन्दू संयुक्त परिवार की लघुतर ईकाई अपना प्रबंधन पृथक करती हैं।

21. प्रकरण में हिन्दू विधि के तहत हिन्दू संयुक्त परिवार एवं हिन्दू संयुक्त परिवार संपति की संकल्पना/अवधारणा के संबंध में कानून/विधि की स्थिति के पश्चात हस्तगत प्रकरण में वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 के हिन्दू संयुक्त परिवार के सदस्य होने के बारे में विश्लेषण किया जाना अपेक्षित है। प्रकरण में वादी द्वारा सजरा प्रस्तुत करते हुए अभिकथन किया है कि वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 के हिन्दू होने के कारण सभी हिन्दू उतराधिकार अधिनियम—1956 से शासित होते है। वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 के पूर्वज आदू के वारिस तेजा पुत्र आदू थे। तेजा पुत्र आदू के वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 जाइन्दा वारिस हैं। साथ ही इस संबंध में मोहन पुत्र तेजा पी.डब्ल्यू.—01 एवं सुखराम पुत्र हीरा पी.डब्ल्यू—02 द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य से वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 के हिन्दू संयुक्त परिवार के सदस्य होने के बारे में हलफनामा प्रस्तुत किया है।

22. प्रकरण में प्रतिवादी संख्या 06—09 द्वारा वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 के हिन्दू संयुक्त परिवार के सदस्य होने के बारे में कोई खण्डन नहीं किया है। साथ ही वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 के तेजा पुत्र आदू के वारिस नहीं होने के संबंध में कोई साक्ष्य सबूत प्रस्तुत नहीं किए है। इसी प्रकार इस संबंध में प्रतिवादी द्वारा प्रस्तुत गवाहों के हलफनामा व साक्ष्य प्रतिपरीक्षण के अवलोकन से ज्ञात होता है कि वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 के हिन्दू संयुक्त परिवार के सदस्य होने के बारे में कोई विशेष व स्पष्ट खंडन नहीं किया है।

23. इस प्रकार वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 के हिन्दू संयुक्त परिवार के सदस्य होने के बारे में वादी द्वारा सजरा प्रस्तुत किये जाने व साक्ष्य प्रस्तुत करने तथा प्रतिवादी संख्या 06—09 द्वारा स्पष्ट खंडन नहीं करने तथा प्रतिवादी द्वारा प्रस्तुत गवाहों के हलफनामा एवं साक्ष्य के प्रतिपरीक्षण में वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 के हिन्दू संयुक्त परिवार के सदस्य होने के बारे में कोई विरोधस्वरूप अभिकथन स्पष्ट नहीं होने के आधार पर वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 के हिन्दू संयुक्त परिवार के सदस्य माना जाना उचित प्रतीत होता है। अतः अब प्रकरण में वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 के हिन्दू संयुक्त परिवार के सदस्य मानने के पश्चात विवादित आराजी के सहदायिकी संपति होने के बारे में विश्लेषण किया जाना अपेक्षित है।

24. इस प्रकार सहदायिकी संपति को समझने के लिए सर्वप्रथम पैतृक संपति की संकल्पना/अवधारणा को समझना आवश्यक है। अतः प्रकरण में हिन्दू उतराधिकार के तहत पैतृक आराजी की संकल्पना/अवधारणा के संबंध में कानून/विधि की स्थिति को समझना अपरिहार्य है। हिन्दू विधि के तहत पैतृक संपति की वृहत संकल्पना को समझने के पश्चात हिन्दू विधि के पैतृक संपति के निम्न आवश्यक अवयव हैः—

1. *किसी हिन्दू को अपने तृतीय पीढी के पूर्वज पुरूष पिता तेजा के पिता तेजा के पिता तेजा (परदादा) की संपति, अपने पिता तेजा व पिता तेजा के पिता तेजा (दादा) की मृत्यु पिता तेजा के पिता तेजा के पिता तेजा (परदादा) की मृत्यु से पहले होने की स्थिति में, विरासत में सीधे प्राप्त होने पर प्राप्त संपति उस हिन्दू की पैतृक*

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

संपति होती है। उपरोक्त प्रथम परिस्थिति में स्पष्ट किया गया है।

2. *किसी हिन्दू को अपने द्वितीय पीढी के पूर्वज पुरूष पिता तेजा के पिता तेजा (दादा) की संपति, अपने पिता तेजा की मृत्यु पिता तेजा के पिता तेजा (दादा) की मृत्यु से पहले होने की स्थिति में, विरासत में सीधे प्राप्त होने पर प्राप्त संपति उस हिन्दू की पैतृक संपति होती है। उपरोक्त द्वितीय परिस्थिति में स्पष्ट किया गया है।*
3. *किसी हिन्दू को अपने प्रथम पीढी के पूर्वज पुरूष पिता तेजा की संपति विरासत में प्राप्त होने पर प्राप्त संपति उस हिन्दू की पैतृक संपति होती है। उपरोक्त तृतीय परिस्थिति में स्पष्ट किया गया है। इस स्थिति में हिन्दू उतराधिकार अधिनियम—1956 के लागू होने के पश्चात धारा—8 के तहत विरासत के तहत प्राप्त संपति को प्राप्तकर्ता हिन्दू की पैतृक संपति नहीं मानकर प्राप्तकर्ता हिन्दू की पृथक संपति माना जाता है। अगर इस स्थिति में विरासत हिन्दू उतराधिकार अधिनियम—1956 के लागू होने से पूर्व खुलती हैं उस स्थिति में ही विरासत के तहत प्राप्त संपति को प्राप्तकर्ता हिन्दू की पैतृक संपति माना जाता है।*
4. *किसी हिन्दू की प्राप्त पैतृक संपति को उस हिन्दू द्वारा अपने पुत्र, अपने पुत्र के पुत्र (पौत्र), अपने पुत्र के पुत्र के पुत्र (प्रपौत्र) होने की स्थिति में आवश्यक रूप से धारण करना अनिवार्य है।*
5. *किसी हिन्दू की प्राप्त पैतृक संपति में उस हिन्दू का पुत्र, पुत्र के पुत्र (पौत्र), पुत्र के पुत्र के पुत्र (प्रपौत्र) जन्म से ही अधिकार निहित रखता है।*
6. *हिन्दू उतराधिकार (संशोधन) अधिनियम—2005 द्वारा हिन्दू उतराधिकार अधिनियम—1956 की धारा—06 में किये गये संशोधन के पश्चात पुत्रियों को भी पुत्रों के समान सहदायक माना गया है। इस आधार पर किसी हिन्दू की प्राप्त पैतृक संपति में उस हिन्दू की पुत्री भी जन्म से ही अधिकार निहित रखती है।*

25. हिन्दु विधि में सहदायिकी संपति में पैतृक आराजी, हिन्दू संयुक्त परिवार के किसी सदस्य की स्वअर्जित संपति, हिन्दू संयुक्त परिवार के किसी सदस्य की पृथक संपति एवं पैतृक संपति से उत्पन्न आय से हिन्दू संयुक्त परिवार के किसी सदस्य द्वारा क्रय की गई संपति शामिल होती है। सहदायिकी संपति की वृहत संकल्पना के निम्न अवयव होते हैः—

1. *सहदायिकी या हिन्दू संयुक्त परिवार की पैतृक आराजी अनिवार्य रूप से सहदायक संपति में निहित रहती है।*
2. *हिन्दू संयुक्त परिवार के किसी सदस्य की स्वअर्जित संपति उस सदस्य विशेष द्वारा हिन्दू संयुक्त परिवार*

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

या सहदायिकी संपति के बंडल में स्वेच्छा से समर्पित किये जाने पर सदस्य विशेष की स्वअर्जित संपति सहदायक संपति में समाहित हो जाती है।

3. *हिन्दू संयुक्त परिवार के किसी सदस्य को अन्य स्रोत यथा—वसीयत, दान व पैतृक आराजी के अतिरिक्त विरासत से प्राप्त संपति उस सदस्य विशेष द्वारा हिन्दू संयुक्त परिवार या सहदायिकी संपति के बंडल में स्वेच्छा से समर्पित किये जाने पर सदस्य विशेष की पृथक संपति सहदायक संपति में समाहित हो जाती है।*
4. *हिन्दू संयुक्त परिवार के किसी सदस्य द्वारा हिन्दू संयुक्त परिवार की संपति से उत्पन्न आय से खरीद की गई संपति आवश्यक रूप से सहदायिकी संपति में समाहित होती है।*
5. *हिन्दू संयुक्त परिवार के किसी सदस्य द्वारा हिन्दू संयुक्त परिवार की संपति को नुकसान पहुचाते हुए किसी सदस्य द्वारा खरीद की गई संपति अनिवार्य रूप से सहदायिकी संपति में समाहित होती है।*

26. प्रकरण में हिन्दू विधि के तहत हिन्दू संयुक्त परिवार एवं हिन्दू संयुक्त परिवार संपति की संकल्पना/अवधारणा के संबंध में कानून/विधि की स्थिति के पश्चात हस्तगत प्रकरण में विवादित आराजी के वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 की पैतृक संपति होने के बारे में विश्लेषण किया जाना अपेक्षित है।

27. साथ ही विवादित आराजी के वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 की संपति प्राप्तकर्ता तेजा पुत्र आदू के वारिसान वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 है। इस प्रकार उक्त संपति के प्राप्तकर्ता प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा उक्त संपति प्रतिवादी संख्या 01 के प्रथम पीढी के पुरूष पुर्वज आदू से विरासत में प्राप्त हुई है। उक्त संपति को वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 द्वारा हिन्दू संयुक्त परिवार की संपति के रूप में धारित किया जा रहा हैं। वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 के हिन्दू संयुक्त परिवार की संपति होने के बारे में वादी द्वारा सजरा प्रस्तुत किये जाने व साक्ष्य प्रस्तुत करने तथा प्रतिवादी संख्या 06—09 द्वारा स्पष्ट खंडन नहीं करने तथा प्रतिवादी द्वारा प्रस्तुत गवाहों के हलफनामा एवं साक्ष्य के प्रतिपरीक्षण में वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 के हिन्दू संयुक्त परिवार की संपति होने के बारे में कोई विरोधस्वरूप अभिकथन स्पष्ट नहीं होने के आधार पर मुतनाजा आराजी को हिन्दू संयुक्त परिवार की संपति माना जाना उचित प्रतीत होता है। इस प्रकार उक्त संपति के प्राप्तकर्ता प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा उक्त संपति प्रतिवादी संख्या 01 के प्रथम पीढी के पुरूष पुर्वज से विरासत में प्राप्त होने के कारण उपरोक्त विश्लेषित परिस्थिति के समान होने के कारण वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 की पैतृक संपति मानना विधिसंगत है।

28. प्रकरण में वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 के हिन्दू संयुक्त परिवार के सदस्य मानने के पश्चात विवादित आराजी के सहदायिकी संपति होने के बारे में विश्लेषण किया जाना अपेक्षित है। इससे पहले प्रकरण में हिन्दू विधि के तहत सर्वप्रथम सहदायक एवं सहदायिकी संपति की संकल्पना/अवधारणा के संबंध में कानून/विधि की स्थिति

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

को समझना अपरिहार्य है। सहदायक एवं सहदायिकी संपति की संकल्पना/अवधारणा के निम्न आवश्यक इस प्रकार हिन्दू संयुक्त परिवार एवं हिन्दू संयुक्त परिवार द्वारा धारित संपति की संकल्पना/अवधारणा के निम्न आवश्यक अवयव हैः—

1. *हिन्दू विधि में सहदायिकी में सभी सदस्यों का एक पुरूष पूर्वज होना आवश्यक है।*
2. *हिन्दू विधि में सहदायिकी में पुरूष पुर्वज के तीन पीढीयों के वंशज सभी पुरूष शामिल होते है।*
3. *हिन्दू उतराधिकार (संशोधन) अधिनियम—2005 द्वारा हिन्दू उतराधिकार अधिनियम—1956 की धारा—06 में किये गये संशोधन के पश्चात पुत्रियों को भी पुत्रों के समान सहदायक माना गया है।*
4. *हिन्दू विधि में सहदायिकी संपति में पुरूष पुर्वज के तीन पीढीयों के वंशज सभी पुरूषों का जन्म से ही अधिकार निहित हो जाता है।*
5. *हिन्दू विधि में सहदायिकी संपति में उस हिन्दू का पुत्र, पुत्र का पुत्र (पौत्र), पुत्र के पुत्र का पुत्र (प्रपौत्र) जन्म से ही अधिकार निहित रखता है।*
6. *हिन्दू विधि में सहदायिकी में कोई सहदायक बिना विभाजन करवाये अपने हिस्से का अंतरण नहीं कर सकता है।*
7. *हिन्दू विधि में सहदायिकी संपति में प्रत्येक सहदायक का विभाजन तक अन्य सहदायकों के साथ समस्त सहदायिकी संपति के प्रत्येक भाग पर समान स्वामित्व माना जाता है।*
8. *हिन्दू विधि में सहदायिकी संपति में प्रत्येक सहदायक का विभाजन तक अन्य सहदायकों के साथ समस्त सहदायिकी संपति के प्रत्येक भाग पर समान कब्जा माना जाता है।*
9. *हिन्दू विधि में सहदायिकी संपति में कोई सहदायक बिना अन्य सहदायकों की सहमति के बिना कोई विधिक आवश्यकता के अपने हिस्से का अंतरण नहीं कर सकता है।*
10. *हिन्दू विधि में सहदायिकी संपति में सहदायक की मृत्यु पर सभी सहदायकों का हिस्सा बढ जाता है। इसी प्रकार सहदायिकी संपति में सहदायक के जन्म पर सभी सहदायकों का हिस्सा घट जाता है। इस प्रकार सहदायिकी संपति में किसी भी सहदायक का हिस्सा निश्चित नहीं होकर सहदायिकी में सदस्यों के जुड़ने व हटने पर परिवर्तित होता रहता है।*
11. *हिन्दू विधि में सहदायिकी संपति में किसी एक सहदायक द्वारा अपना अधिकार/हक त्यागने पर बाकी अन्य सहदायकों के पक्ष में समान अधिकार सृजन माना जाता है।*
12. *हिन्दू विधि में सहदायिकी विधि द्वारा सृजित ईकाई है। किन्ही सदस्यों के द्वारा आपस में सहदायिकी का सृजन नहीं किया जा सकता है।*
13. *हिन्दू विधि में सहदायिकी में गोद द्वारा नये सदस्य जोड़े जा सकते है।*

Signature Not Verified

Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

14. *हिन्दू विधि में सहदायिकी में किसी पुरूष सदस्य के नहीं होने की स्थिति में सहदायिकी के अंत को रोकने हेतु गोद द्वारा नये सदस्य जोड़कर सहदायिकी को आगे बढाया जा सकता है।*

29. प्रकरण में वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 के हिन्दू संयुक्त परिवार के सदस्य होने के बारे में वादी द्वारा सजरा प्रस्तुत किये जाने व साक्ष्य प्रस्तुत करने तथा प्रतिवादी संख्या 06—09 द्वारा स्पष्ट खंडन नहीं करने तथा प्रतिवादी द्वारा प्रस्तुत गवाहों के हलफनामा एवं साक्ष्य के प्रतिपरीक्षण में वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 के हिन्दू संयुक्त परिवार के सदस्य होने के बारे में कोई विरोधस्वरूप अभिकथन स्पष्ट नहीं होने के आधार पर वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 के हिन्दू संयुक्त परिवार के सदस्य माना जाना उचित प्रतीत होता है। अतः वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 के एक ही हिन्दू संयुक्त परिवार के सदस्य होने के आधार पर वादी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 उक्त सहदायिकी में सहदायक होना स्पष्ट है।

30. प्रकरण में हिन्दू संयुक्त परिवार तथा सहदायिकी की इकाई तथा संबंधित ईकाई द्वारा धारित हिन्दू संयुक्त परिवार संपति व सहदायिकी संपति की संकल्पना / अवधारणा को समझने के पश्चात हिन्दू संयुक्त परिवार के मुखिया / कर्ता की भूमिका की संकल्पना / अवधारणा को समझना आवश्यक है। हिन्दू विधि के तहत हिन्दू संयुक्त परिवार के कर्त्ता की कानून की स्थिति निम्न प्रकार स्पष्ट की गई हैः—

1. *अगर पिता जीवित है तो पिता हिन्दू संयुक्त परिवार का कर्ता माना जाता है।*
2. *अगर पिता जीवित नहीं है तो परिवार का वरिष्ठ सदस्य हिन्दू संयुक्त परिवार का कर्ता माना जाता है।*
3. *एक वृहत हिन्दू संयुक्त परिवार ईकाई में अनेक छोटी—छोटी हिन्दू संयुक्त परिवार की लघुतर ईकाई समाहित हो सकती है। इन लघुतर हिन्दू संयुक्त परिवार की लघुतर ईकाई के पृथक—पृथक कर्ता हो सकते है।*
4. *हिन्दू संयुक्त परिवार का कर्ता पर अन्य सदस्यों से विशिष्ट स्थिति रखता है। हिन्दू संयुक्त परिवार का कर्ता को संयुक्त परिवार के सदस्यों से सलाह मशविरा कर संयुक्त परिवार के प्रबंधन की जिम्मेदारी होती है।*

31. प्रकरण में हिन्दू संयुक्त परिवार के मुखिया / कर्ता की भूमिका को समझने के पश्चात की हिन्दू संयुक्त परिवार के मुखिया / कर्ता के प्राधिकार एवं संपति के अंतरण की शक्तियों की संकल्पना / अवधारणा को समझना आवश्यक है। हिन्दू संयुक्त परिवार के कर्ता के प्राधिकार की संकल्पना / अवधारणा के निम्न आवश्यक अवयव हैः—

1. *हिन्दू विधि द्वारा अनुमत परिस्थितियों के अतिरिक्त हिन्दू विधि में संयुक्त हिन्दू परिवार का कर्ता बिना सहदायकों की सहमति के सहदायिकी संपति का अंतरण नहीं कर सकता है।*
2. *हिन्दू विधि में संयुक्त हिन्दू परिवार का कर्ता बिना सहदायकों की सहमति के सहदायिकी संपति को हिन्दू विधि द्वारा*

Signature Not Verified

Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

अनुमत निम्न परिस्थितियों के अंतर्गत अंतरण कर सकता है:—

- *आपातकाले:— विधिक आवश्यकतार्थ।*
- *कुटुम्बार्थे:— परिवार के हितार्थ।*
- *धर्मार्थ:— पवित्र उद्देश्य हेतु।*

3. *हिन्दू विधि में संयुक्त हिन्दू परिवार का कर्ता द्वारा हिन्दू विधि द्वारा अनुमत उक्त परिस्थितियों के अंतर्गत किये गए अंतरण से सभी सहदायक बाध्य होते है।*

32. प्रकरण में हिन्दू संयुक्त परिवार के मुखिया/कर्ता की भूमिका को समझने के पश्चात की हिन्दू संयुक्त परिवार के मुखिया/कर्ता के नाबालिक सहदायक के संबंध में प्राधिकार एवं संपति के अंतरण की शक्तियों की संकल्पना/अवधारणा को समझना आवश्यक है। हिन्दू संयुक्त परिवार के कर्ता के प्राधिकार की संकल्पना/अवधारणा के निम्न आवश्यक अवयव हैः—

1. *हिन्दू विधि में संयुक्त हिन्दू परिवार का कर्ता द्वारा हिन्दू विधि द्वारा अनुमत उक्त परिस्थितियों के अंतर्गत से सभी सहदायक, चाहे सहदायक बालिग हो या नाबालिग, से निरपेक्ष रहते हुए हिन्दू संयुक्त परिवार की संपति का अंतरण कर सकता है।*
2. *हिन्दू विधि में संयुक्त हिन्दू परिवार का कर्ता द्वारा हिन्दू विधि द्वारा अनुमत उक्त परिस्थितियों के अंतर्गत हिन्दू संयुक्त परिवार की संपति के किये गए अंतरण से सभी सहदायक, चाहे सहदायक बालिग हो या नाबालिग, से निरपेक्ष रहते हुए बाध्य होते है।*
3. *हिन्दू विधि में संयुक्त हिन्दू परिवार के कर्ता की अनुपस्थिति में संयुक्त हिन्दू परिवार के मुखिया/संरक्षक द्वारा हिन्दू विधि द्वारा अनुमत उक्त परिस्थितियों के अंतर्गत हिन्दू संयुक्त परिवार की संपति के किये गए अंतरण से सभी सहदायक, चाहे सहदायक बालिग हो या नाबालिग, से निरपेक्ष रहते हुए बाध्य होते है।*

33. प्रकरण में हिन्दू संयुक्त परिवार की संपति में कर्ता के अधिकार की अवधारणा से प्रकरण के तथ्यों का विश्लेषण किया जाना अपेक्षित है। प्रकरण में प्रतिवादी संख्या 01 के हिन्दू संयुक्त परिवार के कर्ता होने के बारे में वादी द्वारा सजरा प्रस्तुत किये जाने व साक्ष्य प्रस्तुत करने तथा प्रतिवादी संख्या 06—09 द्वारा स्पष्ट खंडन नहीं करने तथा प्रतिवादी द्वारा प्रस्तुत गवाहों के हलफनामा एवं साक्ष्य के प्रतिपरीक्षण में प्रतिवादी संख्या 01 के हिन्दू संयुक्त परिवार के कर्ता होने के बारे में कोई विरोधस्वरूप अभिकथन स्पष्ट नहीं होने के आधार पर प्रतिवादी संख्या 01 के हिन्दू संयुक्त परिवार के कर्ता माना जाना उचित प्रतीत होता है। इस आधार पर तेजा पुत्र आदू को अपने पारिवारिक ईकाई के कर्ता माना जाना उचित प्रतीत होता है।

34. प्रकरण में हिन्दू संयुक्त परिवार के मुखिया/कर्ता की भूमिका, प्राधिकार एवं संपति के अंतरण की शक्तियों की संकल्पना/अवधारणा को समझने के पश्चात सहदायक

Signature Not Verified

Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

द्वारा सहदायिकी संपति में अपने हिस्से के बेचान द्वारा अंतरण तथा अंतरण हेतु आवश्यक परिस्थितियों की संकल्पना/अवधारणा को समझना आवश्यक है। हिन्दू संयुक्त परिवार के कर्ता के प्राधिकार की संकल्पना/अवधारणा के निम्न आवश्यक अवयव हैः–

1. *हिन्दू विधि में संयुक्त हिन्दू परिवार का कर्ता बिना सहदायकों की सहमति के सहदायिकी संपति को हिन्दू विधि द्वारा अनुमत निम्न परिस्थितियों के अंतर्गत अंतरण कर सकता हैः–*
   - *आपातकालेः– विधिक आवश्यकतार्थ।*
   - *कुटुम्बार्थेः– परिवार के हितार्थ।*
   - *धर्मार्थः– पवित्र उद्देश्य हेतु।*

35. प्रकरण में सहदायक द्वारा सहदायिकी संपति में अपने हिस्से के विधिक आवश्यकता के तहत परिवार के लाभ हेतु संपति का बेचान द्वारा के अंतरण की संकल्पना/अवधारणा को समझने के पश्चात सहदायक द्वारा सहदायिकी संपति में अपने हिस्से के बेचान द्वारा अंतरण तथा अंतरण हेतु उत्पन्न विधिक आवश्यकता की संकल्पना/अवधारणा को समझना आवश्यक है। हिन्दू संयुक्त परिवार के कर्ता के प्राधिकार की संकल्पना/अवधारणा के निम्न आवश्यक अवयव हैः–

1. *हिन्दू विधि में संयुक्त हिन्दू परिवार का कर्ता बिना सहदायकों की सहमति के सहदायिकी संपति को हिन्दू विधि द्वारा अनुमत परिस्थितियों यथा आपातकालेः–विधिक आवश्यकतार्थ अंतरण कर सकता है।*
2. *सहदायिकी संपति को विधिक आवश्यकतार्थ अंतरण किये जाने हेतु सहदायिकी संपति पर अपरिहार्य, बाध्यकारी दबाव संकट की परिस्थितियां उत्पन्न होनी आवश्यक है।*
3. *सहदायिकी संपति को विधिक आवश्यकतार्थ अंतरण किये जाने हेतु संयुक्त हिन्दू परिवार का कर्ता का आचरण विवेकपूर्ण पुरूष के समान होना आवश्यक है।*
4. *सहदायिकी संपति को विधिक आवश्यकतार्थ अंतरण किये जाने हेतु अंतरण एवं संपति के अंतरण से प्राप्त प्रतिफल राशि का युक्तियुक्त होना आवश्यक है।*

36. प्रकरण में सहदायक द्वारा सहदायिकी संपति में अपने हिस्से के विधिक आवश्यकता के तहत परिवार के लाभ हेतु संपति का बेचान द्वारा के अंतरण की संकल्पना/अवधारणा को समझना आवश्यक है। इस संबंध में माननीय न्यायालयों द्वारा प्रतिपादित असंख्य न्यायिक दृष्टांतों के द्वारा सहदायक द्वारा सहदायिकी संपति में अपने हिस्से के बेचान द्वारा परिवार के लाभ हेतु संपति के अंतरण की संकल्पना/अवधारणा की व्याख्या की गई है। इस श्रृंखला में कुछ महत्वपूर्ण न्यायिक दृष्टांतों द्वारा की गई विवेचना का उद्धरण प्रकरण में प्रासंगिक है। इस संबध में माननीय आंध्रप्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा ***2004 (4) ALD 745*** बउनवान ***Chanumuri Subhaveni And Ors. vs Sappa Srinivasa Rao*** में दिनांक 25.03.2004 को दिये गये निर्णय में सहदायक द्वारा सहदायिकी संपति में अपने हिस्से के विधिक आवश्यकता के तहत परिवार के लाभ हेतु संपति का बेचान द्वारा के अंतरण की

Signature Not Verified

Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

संकल्पना/अवधारणा के संबंध में विवेचना की है। जिसके प्रासंगिक पैरा का उद्धरण निम्न प्रकार हैः–

In the decision referred in Sri Krishn Das v. Nathu Ram, (supra), the Privy Council while dealing with the alienation by father of joint family property and a suit to set aside such alienation, held :

"The statement that, "where a father has sold ancestral property for the discharge of his debts, if the application of the bulk of the proceeds is accounted for the fact that a small part is not accounted for will not invalidate the sale," although in itself a correct statement of the law, is not a complete statement of the law; a sale will not necessarily be invalidated wherever the part of the consideration not accounted for cannot be described as small.
The true question which falls to be answered in such cases is whether the sale itself was one which was justified by legal necessity. This is the point of view from which the matter should be approached.
Where the sale has been held to be justified, but there is no evidence as to the application of a portion of the consideration, a presumption arises that it has been expended for proper purposes and for the benefit of the family.
Where the purchaser acts in good faith and after due enquiry, and is able to show that the sale itself was justified by legal necessity, he is under no obligation to enquire into the application of any surplus and is, therefore, not bound to make repayment of such surplus to the members of the family challenging the sale."

xxx

In the decision referred in B. Ranga Rao (died) v. G. Venkata Krishna Rao, (supra), the Division Bench of this Court while dealing with a similar question at para-10 held :

"The Manager of Joint Hindu family governed by Mitakshara Law is called its 'Karta'. The manager has got power over the income and expenditure of the joint family. He may alienate the joint family properties for legal necessity or for the benefit of the estate. He has got power to contract debts for maintenance of the members of the joint Hindu family, for marriage expenses or coparceners and for defending the head or any other member of the family in suits or other proceedings. The karta of a joint Hindu family cannot dispose of the joint family property or any portion thereof, except for legal necessity or for the benefit of the estate. In the said cases only, the alienations bind the other coparceners of the joint family. It is settled law that where an alienation is made by the karta of a joint Hindu family for a legal necessity or for the benefit of the estate, the consent of minor coparcener is not required."

Signature Not Verified

Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

The Division Bench further held at para 29 as hereunder:

"The karta of a Hindu joint family has got the power to alienate the joint family property only for legal necessity or for the benefit of the family. Where the joint family is sold for legal necessity or for the benefit of the family, the degree of prudence which is required for the Kartha of the joint family, who is not the sole owner of the property is greater than that of the owner, and like a trustee. When the sale is only for legal necessity, the burden on the alienee is to show that the sale itself was justified by legal necessity and he is under no obligation to enquire into application of sale amount in detail by the Kartha as alienee has no control over hint Where the sale of joint family property is for the benefit of the family, the alienee has to take reasonable care to find out whether the sale in fact, was for the benefit of the family on the date of transaction, which includes to find out that the sale was for the purchase of other property of better investment; that the sale consideration was actually utilized for the purpose of purchasing other lands for the benefits of the family."

37. उपरोक्त न्यायिक दृष्टांत के अवलोकन एवं हिन्दू संयुक्त परिवार की संपति में कर्ता के अधिकार की अवधारणा से प्रकरण के तथ्यों का विश्लेषण किया जाना अपेक्षित है। प्रकरण में सहदायिकी संपति में सहदायक द्वारा परिवार के लाभ हेतु विधिक आवश्यकता से संबंधित होने के कारण हिन्दू विधि के इस पक्ष पर बेचान की विधिक आवश्यकता के पक्ष के साथ ही विश्लेषण किया जा रहा है। अब प्रकरण में हिन्दू संयुक्त परिवार के कर्ता के अंतरण के प्राधिकार के विधिक आवश्यकता के पक्ष का अवलोकन किया जाना अपेक्षित हैं।

Alienation ::Legal Necessity:: Sale

38. प्रकरण में सहदायक द्वारा सहदायिकी संपति में अपने हिस्से के विधिक आवश्यकता के तहत परिवार के लाभ हेतु संपति का बेचान द्वारा के अंतरण की संकल्पना / अवधारणा को समझने के पश्चात सहदायक द्वारा सहदायिकी संपति में अपने हिस्से के बेचान द्वारा अंतरण तथा अंतरण हेतु उत्पन्न विधिक आवश्यकता की संकल्पना / अवधारणा को समझना आवश्यक है। इस संबंध में माननीय न्यायालयों द्वारा प्रतिपादित असंख्य न्यायिक दृष्टांतों के द्वारा सहदायक द्वारा सहदायिकी संपति में अपने हिस्से के बेचान द्वारा अंतरण तथा अंतरण हेतु उत्पन्न विधिक आवश्यकता की संकल्पना / अवधारणा की व्याख्या की गई है। इस श्रृंखला में कुछ महत्वपूर्ण न्यायिक दृष्टांतों द्वारा की गई विवेचना का उद्धरण प्रकरण में प्रासंगिक है। इस संबध में माननीय आंध्रप्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा ***2004 (4) ALD 745*** बउनवान ***Chanumuri Subhaveni And Ors. vs Sappa Srinivasa Rao*** में दिनांक 25.03.2004 को दिये गये निर्णय में सहदायक द्वारा सहदायिकी संपति में अपने हिस्से के बेचान द्वारा अंतरण तथा अंतरण हेतु उत्पन्न विधिक आवश्यकता की संकल्पना / अवधारणा के संबंध में विवेचना की है। जिसके प्रासंगिक पैरा का उद्धरण निम्न प्रकार हैः—

While dealing with legal necessity vis-a-vis the powers of karta of joint family, be that a father or a manager, compulsion or pressure on the estate, prudence to be

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

exercised, benefit of the estate, proper management, nature of debts, proof in relation thereof, pious obligation and bona fide enquiries also may be the relevant considerations. Facts may be of varied nature and hence any straight jacket formula cannot be prescribed while judging these aspects and ultimately the overall facts and circumstances of the case may have to be appreciated in a partition action of sons challenging such alienations made by the father. Father or karta of a joint family though has a right to manage should act as a prudent person. On a comparison of the debts, especially in the light of the evidence that there was no pressure from the creditors, no prudent man would resort to selling away almost all the properties to the detriment of the minors of the family.

39. इसी प्रकार माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा सिविल अपील संख्या 1576/1987 बउनवान ***Sushil Kumar & Anr vs Ram Prakash*** में दिनांक 13.01.1988 को दिये गये निर्णय में सहदायक द्वारा सहदायिकी संपति में अपने हिस्से के बेचान द्वारा अंतरण तथा अंतरण हेतु उत्पन्न विधिक आवश्यकता की संकल्पना/अवधारणा के संबंध में विवेचना की है। जिसके प्रासंगिक पैरा का उद्धरण निम्न प्रकार हैः—

It is well settled that in a Joint Hindu Mitakshara Family, a son acquires by birth an interest equal to that of the father in ancestral property. The father by reason of his paternal relation and his position as the head of the family is its Manager and he is entitled to alienate joint family property so as to bind the interests of both adult and minor coparceners in the property, provided that the alienation is made for legal necessity or for the benefit of the estate or for meeting an antecedent debt. The power of the Manager of a joint Hindu family to alienate a joint Hindu family property is analogous to that of a Manager for an infant heir as observed by the Judicial Committee in Hunooman persaud Panday v. Mussumat Babooee Munraj Koonweree, Moore's on Indian Appeal (1856, Vol. VI) 393:

> *"The power of a Manager for an infant heir to charge ancestral estate by loan or mortgage, is, by the Hindu Law, a limited and qualified power, which can only be exercised rightly by the Manager in a case of need, or for the benefit of the estate. But where the charge is one that a prudent owner would make in order to benefit the estate, a bona fide lender is not affected by the precedent mismanagement of the estate. The actual pressure on the estate, the danger to be averted, or the benefit to be conferred, in the particular instance, or the criteria to be regarded. If that danger arises from any misconduct to which the lender has been a party, he cannot take advantage of his own wrong to support a charge in his favour against the heir, grounded on a necessity which his own wrong has helped to cause.*

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

A lender, however, in such circumstances, is bound to inquire into the necessities of the loan, and to satisfy himself as well as he can, with reference to the parties with whom he is dealing, that the Manager is acting in the A particular instance for the benefit of the estate. If he does inquire, and acts honestly, the real existence of an alleged and reasonably-credited necessity is not a condition precedent to the validity of his charge, which renders him bound to see to the application of the money."

40. इसी प्रकार माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा सिविल अपील संख्या 3264/2011 बउनवान ***Kehar Singh (D) Thr. Lrs. vs Nachittar Kaur*** में दिनांक 20.08.2018 को दिये गये निर्णय में सहदायक द्वारा सहदायिकी संपति में अपने हिस्से के बेचान द्वारा अंतरण तथा अंतरण हेतु उत्पन्न विधिक आवश्यकता की संकल्पना/अवधारणा के संबंध में विवेचना की है। जिसके प्रासंगिक पैरा का उद्धरण निम्न प्रकार हैः–

22) Mulla in his classic work "Hindu Law" while dealing with the right of a father to alienate any ancestral property said in Article 254, which reads as under:

"Article 254
254. Alienation by father *– A Hindu father as such has special powers of alienating coparcenary property, which no other coparcener has. In the exercise of these powers he may:*

(1) make a gift of ancestral movable property to the extent mentioned in Article 223, and even of ancestral immovable property to the extent mentioned in Article 224;

(2) sell or mortgage ancestral property, whether movable or immovable, including the interest of his sons, grandsons and great-grandsons therein, for the payment of his own debt, provided the debt was an antecedent debt, and was not incurred for immoral or illegal purposes (Article294)."

23) What is legal necessity was also succinctly said by Mulla in Article 241, which reads as under:

"Article 241
241. What is legal necessity*- The following have been held to be family necessities within the meaning of Article 240:*

(a) payment of government revenue and of debts which are payable out of the family property;
(b) Maintenance of coparceners and of the members of their families;

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

(c) Marriage expenses of male coparceners, and of the daughters of coparceners;
(d) Performance of the necessary funeral or family ceremonies;
(e) Costs of necessary litigation in recovering or preserving the estate;
(f) Costs of defending the head of the joint family or any other member against a serious criminal charge;
(g) Payment of debts incurred for family business or other necessary purpose. In the case of a manager other than a father, it is not enough to show merely that the debt is a pre-existing debt;

The above are not the only indices for concluding as to whether the alienation was indeed for legal necessity, nor can the enumeration of criterion for establishing legal necessity be copious or even predictable. It must therefore depend on the facts of each case. When, therefore, property is sold in order to fulfil tax obligations incurred by a family business, such alienation can be classified as constituting legal necessity." (see Hindu Law by Mulla "22nd Edition")

xxx

26) It has come in evidence that firstly, the family owed two debts and secondly, the family also needed money to make improvement in agriculture land belonging to the family. Pritam Singh, being a Karta of the family, had every right to sell the suit land belonging to family to discharge the debt liability and spend some money to make improvement in agriculture land for the maintenance of his family. These facts were also mentioned in the sale deed.

41. इसी प्रकार माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा सिविल अपील संख्या 1737/2021 बउनवान ***Beereddy Dasareatharami Reddy vs V. Manjunath*** में दिनांक 13.12.2021 को दिये गये निर्णय में सहदायक द्वारा सहदायिकी संपति में अपने हिस्से के बेचान द्वारा अंतरण तथा अंतरण हेतु उत्पन्न विधिक आवश्यकता की संकल्पना/अवधारणा के संबंध में विवेचना की है। जिसके प्रासंगिक पैरा का उद्धरण निम्न प्रकार हैः—

6. Right of the Karta to execute agreement to sell or sale deed of a joint Hindu family property is settled and is beyond cavil vide several judgments of this Court including Sri Narayan Bal and Others v. Sridhar Sutar and Others,2 wherein it has been held that a joint Hindu family is capable of acting through its Karta or adult member of the family in management of the joint Hindu family property. A coparcener who has right to claim a share in the joint Hindu family estate cannot seek injunction against the Karta restraining him from dealing with or entering into a transaction from sale of the joint Hindu family property, albeit post alienation has a right to challenge the alienation if the same is not for legal necessity or for betterment of the estate. Where a Karta has alienated a joint Hindu family

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

property for value either for legal necessity or benefit of the estate it would bind the interest of all undivided members of the family even when they are minors or widows. There are no specific grounds that establish the existence of legal necessity and the existence of legal necessity depends upon facts of each case. The Karta enjoys wide discretion in his decision over existence of legal necessity and as to in what way such necessity can be fulfilled. The exercise of powers given the rights of the Karta on fulfilling the requirement of legal necessity or betterment of the estate is valid and binding on other coparceners.

xxx

9. On the question of satisfaction of the condition of legal necessity, the stand of the respondents is contradictory, for they have pleaded in the written statement and even before us that the joint Hindu family was in need of funds, which shows legal necessity. In fact, as recorded above, the need for funds is duly reflected and so stated in the agreement to sell dated 8 th December 2006 which states that the executants were in need of funds to meet domestic necessities and, therefore, had agreed to sell the suit property. It is also an undisputed position that the suit property was encumbered in favour of the State Bank of Mysore, Adivala Branch, and the executants had informed that the dues of the bank would be cleared to release the mortgage before the date of registration. In Kehar Singh (supra), on the question what is legal necessity, reference was made to Article 241 from Mulla's Hindu Law which states that maintenance of coparceners, family members, marriage expenses, performance of necessary funerals or family ceremonies, costs of necessary litigation for recovering or preserving estate, etc. fall and have been held to be family's necessities. Further, the instances are not the only indices for concluding whether the alienation was in need for legal necessity as enumeration on what would be legal necessity is unpredictable and would depend upon facts of each case. Thus, we are of the opinion that the agreement to sell cannot be set aside on the ground of absence of legal necessity.

42. इस प्रकार हिन्दू संयुक्त परिवार के कर्ता के प्राधिकार के संबंध में उपरोक्त न्यायिक दृष्टांतों के अवलोकन से हिन्दू संयुक्त परिवार के कर्ता के प्राधिकार की संकल्पना/अवधारणा के निम्न आवश्यक अवयव हैः—

5. *हिन्दू विधि में संयुक्त हिन्दू परिवार का कर्ता बिना सहदायकों की सहमति के सहदायिकी संपति को हिन्दू विधि द्वारा अनुमत परिस्थितियों यथाआपातकालेः—विधिक आवश्यकतार्थ अंतरण कर सकता है।*
6. *सहदायिकी संपति को विधिक आवश्यकतार्थ अंतरण किये जाने हेतु सहदायिकी संपति पर अपरिहार्य, बाध्यकारी दबाव संकट की परिस्थितियां उत्पन्न होनी आवश्यक है।*

Signature Not Verified

Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

7. *सहदायिकी संपति को विधिक आवश्यकतार्थ अंतरण किये जाने हेतु संयुक्त हिन्दू परिवार का कर्ता का आचरण विवेकपूर्ण पुरूष के समान होना आवश्यक है।*
8. *सहदायिकी संपति को विधिक आवश्यकतार्थ अंतरण किये जाने हेतु अंतरण एवं संपति के अंतरण से प्राप्त प्रतिफल राशि का युक्तियुक्त होना आवश्यक है।*

Legal Necessity: Onus on Alinee

43. प्रकरण सहदायक द्वारा सहदायिकी संपति में अपने हिस्से के बेचान द्वारा अंतरण तथा अंतरण हेतु उत्पन्न विधिक आवश्यकता की संकल्पना/अवधारणा को समझने के पश्चात सहदायक द्वारा सहदायिकी संपति में अपने हिस्से के बेचान द्वारा विधिक आवश्यकता हेतु किये गये अंतरण के संबंध में खरीददार के उपर अंतरण की विधिक आवश्यकता को साबित करने की विधिक दायित्व के बारे में समझना आवश्यक है। इस संबंध में माननीय न्यायालयों द्वारा प्रतिपादित असंख्य न्यायिक दृष्टांतों के द्वारा सहदायक द्वारा सहदायिकी संपति में अपने हिस्से के बेचान द्वारा विधिक आवश्यकता हेतु किये गये अंतरण के संबंध में खरीददार के उपर अंतरण की विधिक आवश्यकता को साबित करने की विधिक दायित्व के बारे में व्याख्या की गई है। इस श्रृंखला में कुछ महत्वपूर्ण न्यायिक दृष्टांतों द्वारा की गई विवेचना का उद्धरण प्रकरण में प्रासंगिक है। इस संबध में माननीय माननीय आंध्रप्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा ***2004 (4) ALD 745*** बउनवान ***Chanumuri Subhaveni And Ors. vs Sappa Srinivasa Rao*** में दिनांक 25.03.2004 को दिये गये निर्णय में सहदायक द्वारा सहदायिकी संपति में अपने हिस्से के बेचान द्वारा विधिक आवश्यकता हेतु किये गये अंतरण के संबंध में खरीददार के उपर अंतरण की विधिक आवश्यकता को साबित करने की विधिक दायित्व के बारे में विवेचना की है। जिसके प्रासंगिक पैरा का उद्धरण निम्न प्रकार हैः—

> *In the decision referred in B. Ranga Rao (died) v. G. Venkata Krishna Rao, (supra), the Division Bench of this Court while dealing with a similar question at para-10 held :*
>
> *"The Manager of Joint Hindu family governed by Mitakshara Law is called its 'Karta'. The manager has got power over the income and expenditure of the joint family. He may alienate the joint family properties for legal necessity or for the benefit of the estate. He has got power to contract debts for maintenance of the members of the joint Hindu family, for marriage expenses or coparceners and for defending the head or any other member of the family in suits or other proceedings. The karta of a joint Hindu family cannot dispose of the joint family property or any portion thereof, except for legal necessity or for the benefit of the estate. In the said cases only, the alienations bind the other coparceners of the joint family. It is settled law that where an alienation is made by the karta of a joint Hindu family for a legal necessity or for the benefit of the estate, the consent of minor coparcener is not required."*
>
> *The Division Bench further held at para 29 as hereunder:*

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

> *"The karta of a Hindu joint family has got the power to alienate the joint family property only for legal necessity or for the benefit of the family. Where the joint family is sold for legal necessity or for the benefit of the family, the degree of prudence which is required for the Kartha of the joint family, who is not the sole owner of the property is greater than that of the owner, and like a trustee. When the sale is only for legal necessity, the burden on the alienee is to show that the sale itself was justified by legal necessity and he is under no obligation to enquire into application of sale amount in detail by the Kartha as alienee has no control over hint Where the sale of joint family property is for the benefit of the family, the alienee has to take reasonable care to find out whether the sale in fact, was for the benefit of the family on the date of transaction, which includes to find out that the sale was for the purchase of other property of better investment; that the sale consideration was actually utilized for the purpose of purchasing other lands for the benefits of the family."*

44. इसी प्रकार माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा *AIR 1996 SUPREME COURT 2127* बउनवान ***Gangadharan vs Janardhana Mallan*** में दिनांक 10.05.1996 को दिये गये निर्णय में सहदायक द्वारा सहदायिकी संपति में अपने हिस्से के बेचान द्वारा विधिक आवश्यकता हेतु किये गये अंतरण के संबंध में खरीददार के उपर अंतरण की विधिक आवश्यकता को साबित करने की विधिक दायित्व के बारे में विवेचना की है। जिसके प्रासंगिक पैरा का उद्धरण निम्न प्रकार हैः—

> *This question does not appear to be res integra any more as it is settled by a number of judgments rendered by Privy Council and approved by this Court. In Krishna Das & Ors. Vs. Nathu Ram & Anr (AIR 1927 PC 37) (supra) (supra) after referring to earlier case in Hunooman Persaud Panday vs. Musamat Babooee (6 MIA 393), the Court held that where the purchaser acts in good faith and after due enquiry and is able to show that the sale itself was justified by legal necessity. he is under no obligation to enquire into the application of any surplus and is, therefore, not bound to make repayment of such surplus to the members of the family challenging the sale. This judgment was referred to with approval in Ram Sunder Lal & Another's case (supra) where the ratio was laid down in more clear terms. It was held that where the sale of family property by the father was effected for adequate consideration after due enquiry made by or on behalf of vendee as to the legal necessity and legal necessity was proved by vendee to the extent of Rs. 1,744/- at least out of a total price of Rs. 10.767/-, then the mere fact that the vendee after a long interval of time (14 years) was not able to prove conclusively how the surplus was applied by the father is not sufficient ground for setting aside the sale. Again the Privy Council in Ram Krishna Muraji vs. Ratan Chand & Anr. AIR 1(931 PC 136) after referring to the earlier pronouncements quoted with*

Signature Not Verified

Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

approval a passage from 6 MIA 393(supra) and observed as follows :-

"Their Lordships think that the lender is bound to enquire into the necessities for the loan, and to satisfy himself as well as he can, with reference to the parties with whom he is dealing, that the manager is acting in the particular instance for the benefit of the estate. But they think that if he does so enquire, and acts honestly, the real existence of an alleged sufficient and reasonably-credited necessity is not a condition precedent to the validity of his charge, and they do not think that, under such circumstance she is bound to see to the application of the money. It is obvious that money to be secured on any estate is likely to be obtained on easier terms than a loan which rests on mere personal security, and that therefore the mere creation of charge securing a proper debt cannot be viewed as improvident management the purposes for which a loan is wanted are often future, as respects the actual application, and a lender can rarely have, unless he enters on the management, the means of controlling and rightly directing the actual application. Their Lordships do not think that a bona fide creditor should suffer when he has acted honestly and with due caution, but is himself deceived".(Emphasis supplied) Now coming to the decision of this Court in Radhakrishna Das and Anr. vs. Kaluram (1963 (1) SCR 648), this Court after referring to the Privy Council decision observed as follows:

"It is well established by the decisions of the Courts in India and the Privy Council that what the alienee is required to establish is legal necessity for the transaction and that it is not necessary for him to show that every bit of the consideration which he advanced was actually applied for meeting family necessity. In this connection, we may refer to two decisions of the Privy Council. One is Sri Krishan Das Vs. Nathu Ram. In that case the consideration for the alienation was Rs. 35,000/-. The alienee was able to prove that there was legal necessity only to the extent of Rs. 3,000/- and not for the balance. The High Court held that the alienation could be set aside upon the plaintiff's paying Rs. 3,000/- to the alienee. But the Privy Council reversed the decision of the High Court observing that the High Court had completely misapprehended the principle of law applicable to a case of this kind. What the alienee has to establish is the necessity for the transaction. If he establishes that then he cannot be expected to establish how the consideration furnished by him was applied by the alienor. The reason for this, as has been stated by the Privy Council in some other cases, is that the alienee can rarely have the means of controlling and directing the actual application of the money paid or advanced by him unless he enters into the management himself. This decision was followed by the Privy Council in Niamat Rai vs. Din Dayal

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

where at p. 602 and 603 it has observed: "It appears from the judgment of the learned Judges of the High Court that if they had been satisfied that the whole of the Rs. 38,400 Paid out of the sale proceeds was paid in discharge of debts incurred before the negotiation of sale, they would have been of opinion that the sale ought to have been upheld. With this conclusion their Lordships agree, but they are of opinion that undue importance was attached by the learned Judges to the question whether some of the payments made in discharge of debts incurred in the interval between the negotiation of the sale and the execution of the sale deed. Even if there had been no joint family business, proof that the property had been sold for Rs. 43,500 to satisfy pre-existing debts to the amount of Rs. 38,000 would have been enough to support the sale without showing how the balance had been applied, as held by their Lordships in the recent case of Krishan Das vs. Nathu Ram." Both these decisions state the correct legal position, Mr. Sinha's argument must, therefore, be rejected."

xxx

The purchasers have done their best to prove the legal necessity and substantial portion of the sale consideration went into the discharge of the antecedent debts. The First Appellate Court has given a clear finding on this. Having regard to the long lapse of time when the suit was instituted, challenging the alienation, nothing more could be expected from the purchasers to prove the legal necessity and the application of sale consideration.

45. इस संबध में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा सिविल अपील संख्या 3264/2011 बउनवान ***Kehar Singh (D) Thr. Lrs. vs Nachittar Kaur*** में दिनांक 20.08.2018 को दिये गये निर्णय में सहदायक द्वारा सहदायिकी संपति में अपने हिस्से के बेचान द्वारा विधिक आवश्यकता हेतु किये गये अंतरण के संबंध में खरीददार के उपर अंतरण की विधिक आवश्यकता को साबित करने की विधिक दायित्व के बारे में विवेचना की है। जिसके प्रासंगिक पैरा का उद्धरण निम्न प्रकार हैः—

27) In our considered opinion, a case of legal necessity for sale of ancestral property by the Karta (Pritam Singh) was, therefore, made out on facts. In other words, the defendants were able to discharge the burden that lay on them to prove the existence of legal necessity for sale of suit land to defendant Nos. 2 and 3. The defendants thus satisfied the test laid down in Hindu law as explained by Mulla in Article 254 (2) read with Article 241 (a) and (g) quoted above.

28) Once the factum of existence of legal necessity stood proved, then, in our view, no co-coparcener (son) has a right to challenge the sale made by the Karta of his family. The plaintiff being a son was one of the co-coparceners along with his father-Pritam Singh. He had no right to challenge such sale in the light of findings of legal necessity being recorded against him. It was more

Signature Not Verified

Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

so when the plaintiff failed to prove by any evidence that there was no legal necessity for sale of the suit land or that the evidence adduced by the defendants to prove the factum of existence of legal necessity was either insufficient or irrelevant or no evidence at all.

46. इस प्रकार हिन्दू संयुक्त परिवार के कर्ता के प्राधिकार के संबंध में उपरोक्त न्यायिक दृष्टांतों के अवलोकन से सहदायक द्वारा सहदायिकी संपति में अपने हिस्से के बेचान द्वारा विधिक आवश्यकता हेतु किये गये अंतरण के संबंध में खरीददार के उपर अंतरण की विधिक आवश्यकता को साबित करने की विधिक दायित्व की संकल्पना / अवधारणा के निम्न आवश्यक अवयव है:—

1. *सहदायिकी संपति को विधिक आवश्यकतार्थ अंतरण किये जाने हेतु सहदायिकी संपति पर अपरिहार्य, बाध्यकारी दबाव व संकट की परिस्थितियां उत्पन्न होनी आवश्यक है।*
2. *सहदायिकी संपति को विधिक आवश्यकतार्थ अंतरण किये जाने हेतु सहदायिकी संपति पर अपरिहार्य, बाध्यकारी दबाव व संकट की उत्पन्न परिस्थितियां के बारे में क्रेता को अंतरण से पूर्व वास्तविक रूप से जानकारी करने का विधिक दायित्व होता है।*
3. *सहदायिकी संपति को विधिक आवश्यकतार्थ अंतरण किये जाने हेतु सहदायिकी संपति पर अपरिहार्य, बाध्यकारी दबाव व संकट की परिस्थितियां उत्पन्न होने को साबित करने का विधिक भार / दायित्व क्रेता के उपर होता है।*
4. *सहदायिकी संपति को पूर्ववर्ती ऋण हेतु विधिक आवश्यकतार्थ अंतरण किये जाने पर सहदायिकी संपति के अंतरण से प्राप्त प्रतिफल राशि का अंतरणकर्ता द्वारा उपयोग के बारे में जानकारी करने का विधिक दायित्व क्रेता का होता है।*
5. *सहदायिकी संपति को परिवार या सहदायिकी संपति के लाभ या निवेश हेतु विधिक आवश्यकतार्थ अंतरण किये जाने पर सहदायिकी संपति के अंतरण से प्राप्त प्रतिफल राशि का अंतरणकर्ता द्वारा उपयोग के बारे में जानकारी करने का विधिक दायित्व क्रेता का होता है।*

Legal Necessity: Recitals in Sale Deed

47. प्रकरण में हिन्दू संयुक्त परिवार के मुखिया / कर्ता की भूमिका, प्राधिकार एवं संपति के अंतरण की शक्तियों की संकल्पना / अवधारणा को समझने के पश्चात सहदायक द्वारा सहदायिकी संपति में अपने हिस्से के बेचान द्वारा विधिक आवश्यकता हेतु किये गये अंतरण के संबंध में बयनामा में उल्लेखित कथनों की प्रासंगिकता की संकल्पना / अवधारणा को समझना आवश्यक है। इस संबंध में माननीय न्यायालयों द्वारा प्रतिपादित असंख्य न्यायिक दृष्टांतों के द्वारा सहदायक द्वारा सहदायिकी संपति में अपने हिस्से के बेचान द्वारा विधिक आवश्यकता हेतु किये गये अंतरण के संबंध में

Signature Not Verified

Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

बयनामा में उल्लेखित कथनों की प्रासंगिकता की संकल्पना/अवधारणा की व्याख्या की गई है। इस श्रृंखला में कुछ महत्वपूर्ण न्यायिक दृष्टांतों द्वारा की गई विवेचना का उद्धरण प्रकरण में प्रासंगिक है। इस संबंध में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा सिविल अपील 1943/1966 बउनवान ***Rani & Anr vs Santa Bala Debnath*** में दिनांक 14.10. 1970 को दिये गये निर्णय में सहदायक द्वारा सहदायिकी संपति में अपने हिस्से के बेचान द्वारा विधिक आवश्यकता हेतु किये गये अंतरण के संबंध में बयनामा में उल्लेखित कथनों की प्रासंगिकता की संकल्पना/अवधारणा के संबंध में विवेचना की है। जिसके प्रासंगिक पैरा का उद्धरण निम्न प्रकार हैः—

> *Legal necessity to support the sale must however be established by the alienees. Sarala owned the land in dispute as a limited ,owner. She was competent to dispose of the whole estate in the property for legal necessity or benefit to the estate. In adjusting whether the sale conveys the whole estate, the actual pressure on the estate, the danger to be averted, and the benefit to be conferred upon the estate in the particular insistance must be consi- dered. Legal necessity does not mean actual compulsion : it means pressure upon the estate which in law may be regarded as serious and sufficient. The onus of providing legal necessity may be discharged by the alienee by proof of actual necessity or by proof that he made proper and bona fide enquires about the existence of the necessity and that he did all that was reasonable to satisfy himself as to the existence of the necessity.*
>
> *Recitals in a deed of legal necessity do not by themselves prove legal necessity. The recitals are, however, admissible in ;evidence, their value varying according to the circumstances in which the transaction was entered into. The recitals may be used to corroborate other evidence of the existence of legal necessity. The, weight to be attached to the recitals varies according to the circumstances. Where the evidence which could be brought before the Court and is within the special knowledge of the person who seeks to set aside the sale is withheld, such evidence being normally not available to the alienee, the recitals go to his aid with greater force, and the Court may be justified in appropriate cases in raising an inference against the party seeking to set aside the sale on the ground of absence of legal necessity wholly or partially when he withholds evidence in his possession.*
>
> *xxx*
>
> *The recitals in the deed about the existence of pressure upon the estate are therefore amply corroborated by the circumstances.*

48. इस संबध में माननीय आंध्रप्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा ***2004 (4) ALD 745*** बउनवान ***Chanumuri Subhaveni And Ors. vs Sappa Srinivasa Rao*** में दिनांक 25.03.2004 को दिये गये निर्णय में सहदायक द्वारा सहदायिकी संपति में अपने हिस्से के बेचान द्वारा विधिक आवश्यकता हेतु किये गये अंतरण के संबंध में बयनामा में उल्लेखित कथनों

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

की प्रासंगिकता की संकल्पना/अवधारणा के संबंध में विवेचना की है। जिसके प्रासंगिक पैरा का उद्धरण निम्न प्रकार हैः—

In the decision referred in Gopabandhu Das. v. Maheswar Mundian, (supra), the Orissa High Court while dealing with the recitals in a document and the aspect of legal necessity held:

"The Manager of a joint Hindu family has power to alienate for value the joint family property so as to bind the interest both of minor and adult coparceners in the property, provided the alienation is made for legal necessity or benefit of the estate. In the case of a Hindu father, however, he has some special power to alienate coparcenery property which no other coparcener has. It is settled law that where the alienation of joint family property is not approved by the sons, the burden is -on the alienee to establish that the same was supported by legal necessity or benefit of the family or that he made reasonable enquiry about existence of such necessity (See Kumaraswami Mudaliar v. Rajamanikkam Udayar, and Radhakrishna Das v. Kaluram, . In the case in hand as appears from the recitals in the sale deeds (Exts.3 and 4), the necessities for which the suit lands were alienated were for purchase of seeds and for repayment of co-operative loan. In order to prove such necessities, no evidence worth the name was adduced by the plaintiff to discharge the burden. It needs no mention that the recitals about legal necessity in a deed of sale are not sufficient to discharge the burden that lies upon the alienee."

In the decision referred in Hemraj v. Nathu, (supra), a Full Bench of Bombay High Court while dealing with sale of immovable property by mother as guardian of a minor, held:

"The question whether a transaction is for the benefit of an estate or not involves the consideration of something more than merely whether the purchase price paid is a good price; it involves the further question of what is to be done with the purchase money. To sell a piece of land at a very good price would not be beneficial if the purchase money was to be invested in an insolvent business. A manager of a minor under Hindu Law is not entitled to sell merely for the purpose of enhancing the value of the property of the minor, or for increasing the minor's income, but it cannot be said that no transaction can be for the benefit of the minor which is not of a character to protect or preserve property of the minor. Where there was nothing to justify the sale except the fact that the price obtained was greater than that which would normally be obtained interest market and there was no satisfactory evidence as to the manner in which the purchase-money was to be dealt with, the sale of that character and for that purpose was not justified."

Signature Not Verified

Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

In the decision referred in Kumaraswami v. Rajamanikkam, (supra), a Special Bench of Kerala High Court while dealing with alienation of property by father which had been impugned by his sons, held that the burden of proof that it was supported by legal necessity is on the buyer. It was also further held:

"Where alienation of the family property is impugned, the burden is on the buyer to establish that sale was supported by legal necessity or benefit of the family, or that the alienee had made bona fide and reasonable enquiries which made him believe that the necessity existed even though no such necessity did in fact exist."

xxx

Now it is beyond controversy that on the material available on record there was sufficient ancestral nucleus and the other subsequent acquisitions in such a case may have to be taken as joint family properties only. Much reliance was placed on the recitals and when the recitals are being questioned by attacking the very transactions, much importance cannot be attached to such recitals which would be self- serving recitals.

49. इस प्रकार हिन्दू संयुक्त परिवार के कर्ता के प्राधिकार के संबंध में उपरोक्त न्यायिक दृष्टांतों के अवलोकन से सहदायक द्वारा सहदायिकी संपति में अपने हिस्से के बेचान द्वारा विधिक आवश्यकता हेतु किये गये अंतरण हेतु पंजीकृत दस्तावेज में किए गए अभिकथनों की अंतरण हेतु विधिक आवश्यकता स्थापित करने हेतु प्रांसगिकता संकल्पना/अवधारणा के निम्न आवश्यक अवयव हैः—

1. *पंजीकृत दस्तावेज में किए गए विधिक आवश्यकता हेतु अभिकथनों पर पूर्णतः निर्भर/आधारित नही माना जा सकता है।*
2. *पंजीकृत दस्तावेज में किए गए विधिक आवश्यकता हेतु अभिकथन वास्तव में क्रेता द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य या अन्य साक्ष्य व परिस्थितियों से समर्थित होने आवश्यक है।*

Remedies Against Alienations

50. प्रकरण में हिन्दू संयुक्त परिवार के मुखिया/कर्ता की भूमिका, प्राधिकार एवं संपति के अंतरण की शक्तियों की संकल्पना/अवधारणा को समझने के पश्चात सहदायक द्वारा सहदायिकी संपति में अपने हिस्से के बेचान के विरूद्ध उपाय/उपचार की संकल्पना/अवधारणा को समझना आवश्यक है। इस संबंध में माननीय न्यायालयों द्वारा प्रतिपादित असंख्य न्यायिक दृष्टांतों के द्वारा सहदायक द्वारा सहदायिकी संपति में अपने हिस्से के बेचान के विरूद्ध उपाय/उपचार की संकल्पना/अवधारणा की व्याख्या की गई है। इस श्रृंखला में कुछ महत्वपूर्ण न्यायिक दृष्टांतों द्वारा की गई विवेचना का उद्धरण प्रकरण में प्रासंगिक है। इस संबध में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा सिविल अपील संख्या 1576/1987 बउनवान ***Sushil Kumar & Anr vs Ram Prakash*** में दिनांक 13.01.1988 को दिये गये निर्णय में सहदायक द्वारा सहदायिकी

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

संपति में अपने हिस्से के बेचान के विरूद्ध उपाय/उपचार की संकल्पना/अवधारणा के संबंध में विवेचना की है। जिसके प्रासंगिक पैरा का उद्धरण निम्न प्रकार हैः—

Remedies against alienations:

Although the power of disposition of joint family property has been conceded to the manager of joint Hindu family for the reasons aforesaid, the law raises no presumption as to the validity of his transactions. His acts could be questioned in the Courts of law. The other members of the family have a right to have the transaction declared void, if not justified. When an alienation is challenged as being unjustified or illegal it would be for the alienee to prove that there was Iegal necessity in fact or that he made proper and bonafide enquiry as to the existence of such-necessity. It would be for the alienee to prove that he did all that was reasonable to satisfy himself as to the existence of such necessity. If the alienation is found to be unjustified, then it would be declared void. Such alienations would be void except to the extent of manager's share in Madras, Bombay and Central Provinces. The purchaser could get only the manager's share. But in other provinces, the purchaser would not get even that much. The entire alienation would be void. [Mayne's Hindu Law 11th ed. para 396].

In the light of these principles, I may now examine the correctness of the contentions urged in this appeal. The submissions of Mr H.N. Salve, as I understand. proceeded firstly on the premise that a coparcener has as much interest as that of karta in the coparcenary property. Second, the right of copercener in respect of his share in the ancestral property would remain unimpaired, if the alienation is not for legal necessity or for the benefit of the estate. When these two rights are preserved to a coparcener, why should he not prevent the Karta from dissipating the ancestral property by moving the Court? Why should he vainly wait till the purchaser gets title to the property? This appears to be the line of reasoning adopted by the learned counsel.

I do not think that these submissions are sound. It is true that a coparcener takes by birth an interest in the ancestral property, but he is not entitled to separate possession of the coparcenary estate. His rights are not independent of the control of the karta. It would be for the karta to consider the actual pressure on the joint family estate. It would be for him to foresee the danger to be averted. And it would be for him to examine as to how best the joint family estate could be beneficially put into use to subserve the interests of the family. A coparcener cannot interfere in these acts of management. Apart from that, a father-karta in addition to the aforesaid powers of alienation has also the special power to sell or mortgage ancestral property to discharge his antecedent debt which is not tainted with immorality. If there is no such need or benefit, the purchaser takes risk

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

and the right and interest of coparcener will remain unimpaired in the alienated property. No doubt the law confers a right on the coparcener to challenge the alienation made by karta, but that right is not inclusive Of the right to obstruct alienation. Nor the right to obstruct alienation could be considered as incidental to the right to challenge the alienation. These are two distinct rights. One is the right to claim a share in the joint family estate free from unnecessary and unwanted encumbrance. The other is a right to interfere with the act of management of the joint family affairs. The coparcener cannot claim the latter right and indeed, he is not entitled for it. Therefore, he cannot move the court to grant relief by injunction restraining the karta from alienating the coparcenary property.

51. इस प्रकार हिन्दू संयुक्त परिवार के कर्ता के प्राधिकार के संबंध में उपरोक्त न्यायिक दृष्टांतों के अवलोकन से कर्ता द्वारा सहदायिकी संपति के बेचान द्वारा विधिक आवश्यकता हेतु किये गये अंतरण के पश्चात अन्य सहदायक के समक्ष अंतरण को निष्फल करवाने हेतु उपलब्ध विकल्प / उपचार के संबंध में संकल्पना / अवधारणा के निम्न आवश्यक अवयव है:—

1. *हिन्दू संयुक्त परिवार के कर्ता के सहदायिकी संपति के प्रबंधन / अंतरण के विरूद्ध अन्य सहदायक निषेधाज्ञा प्राप्त करने का अधिकार नहीं रखता है।*
2. *हिन्दू संयुक्त परिवार के कर्ता के सहदायिकी संपति के प्रबंधन / अंतरण के दौरान अंतरण के विरूद्ध अन्य सहदायक को कोई विकल्प / उपचार उपलब्ध नहीं है।*
3. *हिन्दू संयुक्त परिवार के कर्ता के सहदायिकी संपति के प्रबंधन / अंतरण के पश्चात ही कर्ता द्वारा अंतरण के विरूद्ध अन्य सहदायक को कर्ता द्वारा अंतरण को विधिक आवश्यकता नहीं होने के आधार पर अंतरण किए जाने के आधार पर ही कर्ता द्वारा किए गए अंतरण को निष्फल करवाने का विकल्प / उपचार उपलब्ध है।*

52. हिन्दू विधि की उक्त स्पष्ट स्थिति के आलोक में प्रकरण में उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा मुतनाजा आराजी का पंजीकृत बयनामा दिनांक 30.08.2010 के द्वारा प्रतिवादी संख्या 06—09 को किया गया अंतरण अपने हिन्दू संयुक्त परिवार के कर्ता के रूप में निष्पादित किया गया है। अब प्रकरण में प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा मुतनाजा आराजी का पंजीकृत बयनामा दिनांक 30.08.2010 के द्वारा प्रतिवादी संख्या 06—09 को किया गया अंतरण का विधिक आवश्यकता के आधार पर निष्पादित किये जाने के बारे में विश्लेषण किया जाना अपेक्षित है।

53. उपरोक्त न्यायिक दृष्टांत के अवलोकन एवं हिन्दू संयुक्त परिवार की संपति में कर्ता के सहदायिकी संपति के अंतरण के अधिकार की अवधारणा से प्रकरण के तथ्यों का विश्लेषण किया जाना अपेक्षित है। प्रकरण में सहदायिकी संपति में कर्ता द्वारा किये गये अंतरण विधिक आवश्यकता से संबंधित होने के कारण हिन्दू विधि के इस पक्ष

Signature Not Verified

Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

पर विश्लेषण किया जाना अपेक्षित है। इस संबंध में वादीगण द्वारा अभिकथन किया गया है कि वादी एवं प्रतिवादी संख्या 02 ता 04 को सहदायिकी संपति के बिना विभाजन व बिना सहदायिको की सहमति लिये पंजीकृत बयनामा दिनांक 30.08.2010 द्वारा प्रतिवादी संख्या 06—09 के पक्ष में निष्पादित करवाने का अधिकार नहीं था। प्रतिवादी संख्या 01 को वादी एवं प्रतिवादी संख्या 02 ता 04 के हिस्से को छोड़ते हुए केवल अपने स्वयं के हिस्से को बेचान करने का अधिकार था। साथ ही वादी एवं प्रतिवादी संख्या 02 ता 04 उक्त निष्पादित पंजीकृत बयनामा दिनांक 30.08.2010 में पक्षकार नहीं होने के कारण उक्त बयनामा से बाध्य नहीं है। साथ ही दौराने साक्ष्य गवाह ने अभिकथन किया कि उक्त पंजीकृत बयनामा दिनांक दिनांक 30.08.2010 आरंभ से ही अवैध, शून्य व निष्प्रभावी है। साथ ही दौराने बहस वादीगण ने अभिकथन किया कि उक्त पंजीकृत बयनामा दिनांक दिनांक 30.08.2010 आरंभ से ही अवैध, शून्य व निष्प्रभावी है।

54. इस संबंध में हिन्दू विधि का सुस्थापित सिद्धांत है कि सहदायिकी संपति को विधिक आवश्यकतार्थ अंतरण किये जाने हेतु सहदायिकी संपति पर अपरिहार्य, बाध्यकारी दबाव व संकट की परिस्थितियां उत्पन्न होनी आवश्यक है। हिन्दू विधि में संयुक्त हिन्दू परिवार का कर्ता बिना सहदायकों की सहमति के सहदायिकी संपति को हिन्दू विधि द्वारा अनुमत परिस्थितियों यथा *आपातकाले:—विधिक आवश्यकतार्थ* अंतरण कर सकता है। हिन्दू संयुक्त परिवार के कर्ता के सहदायिकी संपति के प्रबंधन/अंतरण के पश्चात ही कर्ता द्वारा अंतरण के विरूद्ध अन्य सहदायक को कर्ता द्वारा अंतरण को विधिक आवश्यकता नहीं होने के आधार पर अंतरण किए जाने के आधार पर ही कर्ता द्वारा किए गए अंतरण को निष्फल करवाने का विकल्प/उपचार उपलब्ध है।

55. हिन्दू विधि की उक्त स्पष्ट स्थिति के आलोक में प्रकरण में उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा मुतनाजा आराजी का पंजीकृत बयनामा दिनांक दिनांक 30.08.2010 के द्वारा प्रतिवादी संख्या 06—09 को किया गया अंतरण अपने हिन्दू संयुक्त परिवार के कर्ता के रूप में निष्पादित किया गया है। अब प्रकरण में प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा मुतनाजा आराजी का पंजीकृत बयनामा दिनांक दिनांक 30.08.2010 के द्वारा प्रतिवादी संख्या 06—09 को किया गया अंतरण का विधिक आवश्यकता के आधार पर निष्पादित किये जाने के बारे में विश्लेषण किया जाना अपेक्षित है। इस संबंध में हिन्दू विधि का सुस्थापित सिद्धांत है कि सहदायिकी संपति को विधिक आवश्यकतार्थ अंतरण किये जाने हेतु सहदायिकी संपति पर अपरिहार्य, बाध्यकारी दबाव व संकट की परिस्थितियां उत्पन्न होने को साबित करने का विधिक भार/दायित्व क्रेता के उपर होता है। इस प्रकार इस संबंध में प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा मुतनाजा आराजी का पंजीकृत बयनामा दिनांक 30.08.2010 के द्वारा प्रतिवादी संख्या 06—09 को किया गया अंतरण का विधिक आवश्यकता निहित होने को स्पष्ट करने का भार प्रतिवादी संख्या 06—09 के उपर है।

56. इस संबंध में हिन्दू विधि का सुस्थापित सिद्धांत है कि सहदायिकी संपति को विधिक आवश्यकतार्थ अंतरण किये जाने हेतु सहदायिकी संपति पर अपरिहार्य, बाध्यकारी दबाव व संकट की उत्पन्न परिस्थितियां के बारे में क्रेता को अंतरण से पूर्व वास्तविक रूप से जानकारी करने का विधिक दायित्व होता है। इस संबंध में प्रतिवादी के द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य व गवाह प्रतिपरीक्षण का अवलोकन किया जाना आवश्यक है। इस संबंध में सर्वप्रथम पंजीकृत बयनामा दिनांक 30.08.2010 प्रदर्श—डी—01ए का अवलोकन

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

किया जाना आवश्यक है। पंजीकृत बयनामा दिनांक 30.08.2010 प्रदर्श–डी–01ए के अवलोकन से ज्ञात होता है कि पंजीकृत बयनामा दिनांक 30.08.2010 प्रदर्श–डी–01ए में प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा अपनी संपति का बेचान परिवार की आवश्यकताओं के लिए किया जाना अभिकथित किया हैं। इस प्रकार बेचान पत्र में प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा अभिकथित अभिवचनों के आधार पर प्रथमदृष्टया मुतनाजा संपति का बेचान परिवार की आवश्यकताओ के लिए विधिक आवश्यकता के आधार पर किया जाना प्रतीत होता है।

57. परंतु इस संबंध में हिन्दू विधि का सुस्थापित सिद्धांत है कि पंजीकृत दस्तावेज में किए गए विधिक आवश्यकता हेतु अभिकथनों पर पूर्णतः निर्भर/आधारित नही माना जा सकता है। पंजीकृत दस्तावेज में किए गए विधिक आवश्यकता हेतु अभिकथन वास्तव में क्रेता द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य या अन्य साक्ष्य व परिस्थितियों से समर्थित होने आवश्यक है। अतः पंजीकृत बयनामा दिनांक 30.08.2010 में प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा अभिकथित किये गये अभिवचनों का अंतरण के समय की परिस्थितियों द्वारा समर्थित होना आवश्यक है। इस संबंध में प्रतिवादी के द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य व गवाह प्रतिपरीक्षण का अवलोकन किया जाना आवश्यक है।

58. प्रकरण में साक्ष्य वादी प्रतिपरीक्षण में पी.डब्ल्यू.–01 मोहन पुत्र तेजा के साक्ष्य प्रतिपरीक्षण से प्रतीत होता है कि प्रतिवादी संख्या 06–09 द्वारा मुतनाजा आराजी को क्रय किये जाने के संबंध में कोई पूर्व जानकारी प्राप्त नहीं थी। इसी प्रकार पी.डब्ल्यू.–02 के साक्ष्य प्रतिपरीक्षण से प्रतीत होता है कि प्रतिवादी संख्या 06–09 द्वारा मुतनाजा आराजी को क्रय किये जाने के संबंध में कोई पूर्व जानकारी प्राप्त नहीं थी। इसी प्रकार डी.डब्ल्यू.–01 किशना पुत्र तेजा, डी.डब्ल्यू.–02 मांगी पुत्र पांचा, डी.डब्ल्यू.–03 परमेश्वरी पत्नी पांचा, डी.डब्ल्यू.–04 अशोक पुत्र गंगा के साक्ष्य प्रतिपरीक्षण से प्रतीत होता है कि प्रतिवादी संख्या 06–09 द्वारा मुतनाजा आराजी को क्रय किये जाने के संबंध में कोई पूर्व जानकारी प्राप्त नहीं थी। इस प्रकार मुतनाजा आराजी पर अपरिहार्य, बाध्यकारी दबाव व संकट की परिस्थितियां उत्पन्न होने के बारे में क्रेता प्रतिवादी संख्या 06–09 द्वारा संपति के अंतरण में विधिक आवश्यकता निहित होने के बारे में अपने उपर आरोपित दायित्व के बारे में कोई अभिकथन या साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया है। इस प्रकार मुतनाजा आराजी पर अपरिहार्य, बाध्यकारी दबाव व संकट की परिस्थितियां उत्पन्न होने के बारे में क्रेता प्रतिवादी संख्या 06–09 द्वारा संपति के अंतरण में विधिक आवश्यकता निहित होने के बारे में अपने उपर आरोपित दायित्व का निर्वहन किया जाना साबित करने में असफल रहा है। अतः प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा हिन्दू संयुक्त परिवार के कर्ता की हैसियत से प्रतिवादी संख्या 06–09 को पंजीकृत बयनामा दिनांक 30.08.2010 द्वारा मुतनाजा आराजी का परिवार की विधिक आवश्यकतार्थ अंतरण को वादी एवं प्रतिवादी संख्या 02 ता 04 निष्फल घोषित करवाने हेतु आवश्यक परिस्थितियों को साबित करने में सफल रहे है। इस कारण प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा हिन्दू संयुक्त परिवार के कर्ता की हैसियत से प्रतिवादी संख्या 06–09 को पंजीकृत बयनामा दिनांक 30.08.2010 द्वारा मुतनाजा आराजी का परिवार की विधिक आवश्यकतार्थ अंतरण को वादी एवं प्रतिवादी संख्या 02 ता 04 पर बाध्यकारी नहीं है। इस कारण पंजीकृत बयनामा दिनांक 30.08.2010 वादी एवं प्रतिवादी संख्या 02 ता 04 के हक हिस्से तक आरम्भ से शून्य, अवैध व निष्प्रभावी प्रतीत होता है। इस आधार पर तनकी संख्या 01 व 02 वादी के पक्ष में स्वीकार की जाती है।

Signature Not Verified

Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

59. इस संबंध में तनकी संख्या 03 व 04 के संबंध में विश्लेषण किया जाना अपेक्षित है। प्रकरण में तनकी संख्या 03 व 04 निम्न प्रकार हैः—

> *3. आया वादी ग्राम आलपुरा के खेत खसरा संख्या 188/2 रकबा 0 4—00 बीघा की भूमि में 1/5 हिस्से की खातेदारी घोषणा के बाद विभाजन की डिक्री से पृथक कराकर कब्जा प्राप्त करने का अधिकारी है।*
>
> *..................................वादी*
>
> *4. आया वादी उपरोक्तानुसार बाद घोषणा व बंटवाडा विरूद्ध विप्रार्थीगण स्थाई निषेधाज्ञा पाने का अधिकारी है।*
>
> *..................................वादी*

60. प्रकरण में तनकी संख्या 03 व 04 को साबित करने का भार वादी के उपर है। प्रकरण में तनकी संख्या 01 व 02 के वादी के पक्ष में स्वीकार होने से तनकी संख्या 03 व 04 पर पृथक से विश्लेषण की आवश्यकता नहीं है। इस प्रकार तनकी संख्या 03 व 04 वादी के पक्ष में स्वीकार की जाती है।

61. प्रकरण में अब तनकी संख्या 05 के संबंध में विश्लेषण किया जाना अपेक्षित है। प्रकरण में तनकी संख्या 05 निम्न प्रकार हैः—

> *5. आया ग्राम आलपुरा के खेत खसरा संख्या 188/2 रकबा 4—00 बीघा की भूमि प्रतिवादी संख्या 01 के स्वामित्व की थी जिसे प्रतिवादी संख्या 01 ने दिनांक 30.08.2010 को अपनी स्वेच्छा से प्रतिवादी संख्या 06 ता 09 को प्रतिफल प्राप्त कर पंजीबद्ध दस्तावेज से बेचान कर कब्जा प्रतिवादी संख्या 06 ता 09 को सुपुर्द कर दिया गया है, बेचान निष्प्रभावी सिविल न्यायालय ही कर सकता है। उक्त आराजी पर वादी व प्रतिवादी संख्या 02 से 05 का इस भूमि में किसी प्रकार का कोई हक अधिकार नहीं होने व वादी का वाद मनगढन्त तथ्यों पर आधारित एवं राजस्व न्यायालय के क्षेत्राधिकार का नहीं होने से खारिज करवाने के अधिकारी है।*
>
> *..................................प्रतिवादी*

62. प्रकरण में तनकी संख्या 05 को साबित करने का भार प्रतिवादी के उपर है। तनकी संख्या 05 प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा प्रतिवादी संख्या 06—09 को पंजीकृत बयनामा दिनांक 30.08.2010 द्वारा किये गये अंतरण को आरंभ से शून्य, अवैध व निष्प्रभावी घोषित करवाने को लेकर है। प्रकरण में तनकी के विश्लेषण से पूर्व पंजीकृत दस्तावेज के शून्यकरणीय व आरंभ से शून्य होने तथा राजस्व न्यायालय व सिविल न्यायालय के क्षेत्राधिकार को लेकर विधि की स्थिति को समझना आवश्यक है।

Void : Voidable

63. अब प्रकरण में हिन्दू विधि की संकल्पना/अवधारणा को समझने के पश्चात सहदायक द्वारा सहदायिकी संपति में अपने हिस्से के बेचान के पंजीकृत दस्तावेज के शून्य व शून्यकरणीय होने की संकल्पना/अवधारणा को समझना आवश्यक है। इस संबंध में माननीय न्यायालयों द्वारा प्रतिपादित असंख्य न्यायिक दृष्टांतों के द्वारा सहदायक द्वारा सहदायिकी संपति में अपने हिस्से के बेचान के पंजीकृत दस्तावेज के शून्य व शून्यकरणीय होने संकल्पना/अवधारणा की व्याख्या की गई है। इस श्रृंखला में कुछ महत्वपूर्ण न्यायिक दृष्टांतों द्वारा की गई विवेचना का उद्धरण प्रकरण में प्रासंगिक है। इस संबंध में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा सिविल अपील संख्या 598/2005

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

बउनवान ***Baljinder Singh vs Rattan Singh*** में दिनांक 05.08.2008 को दिये गये निर्णय में शून्य व शून्यकरणीय होने की संकल्पना/अवधारणा के संबंध में विवेचना की है। जिसके प्रासंगिक पैरा का उद्धरण निम्न प्रकार हैः—

> *24. In Sadasivam v. K. Doraisamy (AIR 1996 SC 1724) it was found that when the father has executed sale deed in favour of a near relative and the intention to repay debt or legal necessity has not been proved as a sham transaction.*
>
> *25. In Words and Phrases by Justice R.P. Sethi the expression `void' and `'voidable' read as under:*
>
> *"Void- Black's Law Dictionary gives the meaning of the word "void" as having different nuances in different connotations. One of them is of course "null or having no legal force or binding effect". And the other is "unable in law, to support the purpose for which it was intended". After referring to the nuances between void and voidable the lexicographer pointed out the following: "The word `void' in its strictest sense, means that which has no force and effect, is without legal efficacy, is incapable of being enforced by law, or has no legal or binding force, but frequently the word is used and construed as having the more liberal meaning of `voidable'. The word `void' is used in statute in the sense of utterly void so as to be incapable of ratification, and also in the sense of voidable and resort must be had to the rules of construction in many cases to determine in which sense the legislature intended to use it. An act or contract neither wrong in itself nor against public policy, which has been declared void by statute for the protection or benefit of a certain party, or class of parties, is voidable only". (Pankan Mehra and Anr. v. State of Maharashtra and Ors. (2000 (2) SCC 756).*
>
> *Per Fazal Ali, J- The meaning of the word "void" is stated in Black's Law Dictionary (3rd Edn.) to be as follows:*
>
> *"Null and void; ineffectual;*
> *nugatory; having no legal force or binding effect; unable in law to support the purpose for which it was intended; nugatory and ineffectual so that nothing can cure it; not valid". Keshavan Madhava Menon v. State of Bombay (1951 SCR 228).*
>
> *The expression "void" has several facets. One type of void acts, transactions, decrees are those which are wholly without jurisdiction, ab initio void and for avoiding the same no declaration is necessary, law does not take any notice of the same and it can be disregarded in collateral proceeding or otherwise. Judicial Review of Administration Action, 5th Edn., para 5-044 (See also Judicial Remedies in Public Law at page 131; Dhurandhar Prasad Singh v. Jai Prakash University and Ors. (2001 (6) SCC 534) The other type of void act, e.g. may be transaction against a minor*

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

without being represented by a next friend. Such a transaction is a good transaction against the whole world. So far as the minor is concerned, if he decides to avoid the same and succeeds in avoiding it by taking recourse to appropriate preceding the transaction becomes void from the very beginning. Another type of void act may be one, which is not a nullity, but for avoiding the same, a declaration has to be made. (See Government of Orissa v Ashok Transport Agency and Ors (2002 (9) SCC 28) The meaning to be given to the word "void" in Article 13 of the Constitution is no longer res integra, for the matter stands concluded by the majority decision of the Court in Keshavan Madhava Menon v. The State of Bombay (1951) SCR 228. We have to apply the ratio decidendi in that case to the facts of the present case. The impugned Act was a existing law at the time when the Constitution came into force. That existing law imposed on the exercise of the right guaranteed in the citizens of the India by Article 19(1)(g) restrictions which could not be justified as reasonable under clause (6) as it then stood and consequently under Article 13 (1) that existing Law became void "to the extent of such inconsistency". As explained in Keshavan Madhava Menon's case (supra) the Law became void in toto or for all purposes or for all times or for all persons but only "to the extent of such inconsistency", that is to say, to the extent it became inconsistent with the provisions of Part III which conferred the fundamental rights on the citizens. It did not become void independently of the existence of the rights guaranteed by Part III. (See Bhikaji Narain Dhakras and Ors. v. The State of Madhya Pradesh and Anr. (1955 (2) SCR 589).

The word "void" has a relative rather than an absolute meaning. It only conveys the idea that the order is invalid or illegal. In Halsbury's Laws of England, 4th Edn. (Re-issue) Vol. 1(1) in para 26, p.31 it is stated thus: "If an act of decision, or an order or other instrument is invalid, it should, in principle, be null and void for all purposes; and it has been said that there are no degrees of nullity. Even though such an act is wrong and lacking in jurisdiction, however, it subsists and remains fully effective unless and until it is set aside by a court of competent jurisdiction. Until its validity is challenged, its legality is preserved". (See State of Kerala v.

M.K. Kunhikannan Nambiar Manjeri Manikoth, Naduvil (dead) and ors. (1996 (1) SCC 435).

"Voidable act" is that which is a good act unless avoided, e.g. if a suit is filed for a declaration that a document is fraudulent, it is voidable as the apparent state of affairs is the real state of affairs and a party who alleges otherwise is oblige to prove it. If it is proved that the document is

Signature Not Verified

Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

forged and fabricated and a declaration to that effect is given, a transaction becomes void from the very beginning. There may be voidable transaction which is required to be set aside and the same is avoided from the day it is so set aside and not any day prior to it. In cases, where legal effect of a document cannot be taken away without setting aside the same, it cannot be treated to be void but would be obviously voidable. Government of Orissa v. Ashok Transport Agency and Ors. (2002 (9) SCC 28)".

64. इसी प्रकार माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा सिविल अपील संख्या 4481/2001 बउनवान ***Dhurandhar Prasad Singh vs Jai Prakash University*** में दिनांक 24.07.2001 को दिये गये निर्णय में शून्य व शून्यकरणीय होने की संकल्पना/अवधारणा के संबंध में विवेचना की है। जिसके प्रासंगिक पैरा का उद्धरण निम्न प्रकार हैः—

The expressions void and voidable have been subject matter of consideration before English Courts times without number. In the case of Durayappah v. Fernando and others [1967] 2 All England Law Reports 152, the dissolution of municipal council by the minister was challenged. Question had arisen before the Privy Council as to whether a third party could challenge such a decision. It was held that if the decision was complete nullity, it could be challenged by anyone, anywhere. The Court observed at page 158 thus:-

The answer must depend essentially on whether the order of the Minister was a complete nullity or whether it was an order voidable only at the election of the council. If the former, it must follow that the council is still in office and that, if any councillor, ratepayer or other person having a legitimate interest in the conduct of the council likes to take the point, they are entitled to ask the court to declare that the council is still the duly elected council with all the powers and duties conferred on it by the Municipal Ordinance.

In the case of In re McC. (A minor) [1985] 1 Appeal Cases 528, the House of Lords followed the dictum of Lord Coke in the Marshalsea Case quoting a passage from the said judgment which was rendered in 1613 where it was laid down that where the whole proceeding is coram non judice which means void ab initio, the action will lie without any regard to the precept or process. The Court laid down at page 536 thus:-

Consider two extremes of a very wide spectrum. Jurisdiction meant one thing to Lord Coke in 1613 when he said in the Marshalsea Case (1613) 10 Co. Rep.68b, at p.76a:

when a court has jurisdiction of the cause, and, proceeds inverso ordine or erroneously, there the party who sues, or the officer or minister of the court who executes the precept or process of the court, no action lies against them. But when the court has not jurisdiction of the cause, there the whole proceeding is coram non judice, and actions will lie against them without any regard of the precept or process.

Signature Not Verified

Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

The Court of the Marshalsea in that case acted without jurisdiction because, its jurisdiction being limited to members of the Kings household, it entertained a suit between two citizens neither of whom was a member of the Kings household. Arising out of those proceedings a party arrested by process of the Marshalsea could maintain an action for false imprisonment against, inter alios, the Marshal who directed the execution of the process. This is but an early and perhaps the most quoted example of the application of a principle illustrated by many later cases where the question whether a court or other tribunal of limited jurisdiction has acted without jurisdiction (coram non judice) can be determined by considering whether at the outset of the proceedings that court had jurisdiction to entertain the proceedings at all. So much is implicit in the Lord Cokes phrase jurisdiction of the cause.

In another decision, in the case of Director of Public Prosecutions v. Head [1959] Appeal Cases 83, House of Lords was considering validity of an order passed by Secretary of the State in appeal preferred against judgment of acquittal passed in a criminal case. The Court of Criminal Appeal quashed the conviction on the ground that the aforesaid order of Secretary was null and void and while upholding the decision of the Court of Criminal Appeal, the House of Lords observed at page 111 thus:-

This contention seems to me to raise the whole question of void or voidable: for if the original order was void, it would in law be a nullity. There would be no need for an order to quash it. It would be automatically null and void without more ado. The continuation orders would be nullities too, because you cannot continue a nullity. The licence to Miss Henderson would be a nullity. So would all the dealings with her property under Section 64 of the Act of 1913. None of the orders would be admissible in evidence. The Secretary of State would, I fancy, be liable in damages for all of the 10 years during which she was unlawfully detained, since it could all be said to flow from his negligent act; see section 16 of the Mental Treatment Act, 1930.

But if the original order was only voidable, then it would not be automatically void. Something would have to be done to avoid it. There would have to be an application to the High Court for certiorari to quash it.

This question was examined by Court of Appeal in the case of R. v. Paddington Valuation Officer and another, Exparte Peachey Property Corporation, Ltd. [1965] 2 All England Law Reports 836 where the valuation list was challenged on the ground that the same was void altogether. On these facts, Lord Denning, M.R. laid down the law observing at page 841 thus:-

It is necessary to distinguish between two kinds of invalidity. The one kind is where the invalidity is so grave that the list is a nullity altogether. In which case there is no need for an order to quash it. It is automatically null and

Signature Not Verified

Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

void without more ado. The other kind is when the invalidity does not make the list void altogether, but only voidable. In that case it stands unless and until it is set aside. In the present case the valuation list is not, and never has been, a nullity. At most the first respondent- acting within his jurisdiction-exercised that jurisdiction erroneously. That makes the list voidable and not void. It remains good until it is set aside.

De Smith, Woolf and Jowell in their treatise Judicial Review of Administrative Action, Fifth Edition, paragraph 5-044, has summarised the concept of void and voidable as follows: Behind the simple dichotomy of void and voidable acts (invalid and valid until declared to be invalid) lurk terminological and conceptual problems of excruciating complexity. The problems arose from the premise that if an act, order or decision is ultra vires in the sense of outside jurisdiction, it was said to be invalid, or null and void. If it is intra vires it was, of course, valid. If it is flawed by an error perpetrated within the area of authority or jurisdiction, it was usually said to be voidable; that is, valid till set aside on appeal or in the past quashed by certiorari for error of law on the face of the record. Clive Lewis in his works Judicial Remedies in Public Law at page 131 has explained the expressions void and voidable as follows:-

A challenge to the validity of an act may be by direct action or by way of collateral or indirect challenge. A direct action is one where the principal purpose of the action is to establish the invalidity. This will usually be by way of an application for judicial review or by use of any statutory mechanism for appeal or review. Collateral challenges arise when the invalidity is raised in the course of some other proceedings, the purpose of which is not to establish invalidity but where questions of validity become relevant.

Thus the expressions void and voidable have been subject matter of consideration on innumerable occasions by courts. The expression void has several facets. One type of void acts, transactions, decrees are those which are wholly without jurisdiction, ab initio void and for avoiding the same no declaration is necessary, law does not take any notice of the same and it can be disregarded in collateral proceeding or otherwise. The other type of void act, e.g., may be transaction against a minor without being represented by a next friend. Such a transaction is good transaction against the whole world. So far the minor is concerned, if he decides to avoid the same and succeeds in avoiding it by taking recourse to appropriate proceeding the transaction becomes void from the very beginning. Another type of void act may be which is not a nullity but for avoiding the same a declaration has to be made. Voidable act is that which is a good act unless avoided, e.g., if a suit is filed for a declaration that a document is fraudulent and/or forged and fabricated, it is voidable as apparent state of affairs is real state of affairs and a party

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

who alleges otherwise is obliged to prove it. If it is proved that the document is forged and fabricated and a declaration to that effect is given a transaction becomes void from the very beginning. There may be a voidable transaction which is required to be set aside and the same is avoided from the day it is so set aside and not any day prior to it. In cases, where legal effect of a document cannot be taken away without setting aside the same, it cannot be treated to be void but would be obviously voidable.

65. प्रकरण में शून्य व शून्यकरणीय होने की संकल्पना/अवधारणा की अवधारणा को समझने के पश्चात पंजीकृत दस्तावेज के शून्य व शून्यकरणीय होने के आधार पर सिविल न्यायालय एवं राजस्व न्यायालय के क्षेत्राधिकार के विवाद के संबंध में कानूनन स्थिति की स्पष्टता को समझना आवश्यक है। इस संबंध में माननीय राजस्थान उच्च न्यायालय जयपुर द्वारा सिविल प्रथम अपील संख्या 330/2010 बउनवान ***Ram Kripal Dasji Charitable Trust vs Phool Chand*** में दिनांक 29.02.2012 को दिये गये निर्णय में पंजीकृत दस्तावेज के शून्य व शून्यकरणीय होने के आधार पर सिविल न्यायालय एवं राजस्व न्यायालय के क्षेत्राधिकार के विवाद के संबंध में विवेचना की है। जिसके प्रासंगिक पैरा का उद्धरण निम्न प्रकार है:—

11. (......)

(vi) It is well settled that the question of jurisdiction namely whether a suit is exclusively triable by a revenue court or a Civil Court can take cognizance of it has to be decided on the allegations made in the plaint. It is also further settled that it is the substance of the plaint and the true nature of the suit that is to be seen to determine the question of jurisdiction. If in substance the relief claimed is one which the revenue court alone is entitled to give, the jurisdiction of the civil court will be ousted even though it may require the revenue court to incidentally determine some ancillary facts. In order to determine the true nature of the relief claimed in a suit, the pith and substance and not the form in which the relief may be couched has to be considered. Each case has to be examined on its own particular facts and no universal rule can be applicable to every case.

xxx

In my view unless a clear finding to that effect is given, the relief claimed by the appellant cannot be granted. Under the provisions of Rajasthan Tenancy Act, declaration and permanent injunction regarding an agricultural land can be granted only by a revenue court. It cannot be disputed that a suit for declaration of tenancy rights regarding an agricultural land has to be filed under Section 88 whereas a suit for permanent injunction has to be filed under Section 188 of the Rajasthan Tenancy Act. Section 207 of the Rajasthan Tenancy Act provides that all suits of the nature specified in the III Schedule of the Act shall be heard and determined by a revenue court and no court other than a revenue court shall take cognizance of any such suit. A suit for declaration finds place in Item No.5 whereas suit for permanent injunction finds place in Item No.23 C of the III

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

> *Schedule. It is thus, very much clear that the present suit was clearly barred by law as Section 207 of the Rajasthan Tenancy Act bars such a suit from being taken cognizance and considered by a court other than a revenue court. The learned trial Court has rightly arrived at a conclusion that the suit is not entertainable by a civil Court.*

66. इसी प्रकार माननीय राजस्थान उच्च न्यायालय जोधपुर द्वारा सिविल रिवीजन संख्या 137/2015 बउनवान ***Hasti Cement Pvt. Ltd. & Anr vs Sandeep Charan*** में दिनांक 07.03.2018 को दिये गये निर्णय में पंजीकृत दस्तावेज के शून्य व शून्यकरणीय होने के आधार पर सिविल न्यायालय एवं राजस्व न्यायालय के क्षेत्राधिकार के विवाद के संबंध में विवेचना की है। जिसके प्रासंगिक पैरा का उद्धरण निम्न प्रकार हैः–

> *From what has been noticed hereinbefore, it can be safely concluded that if the allegation in the plaint/substance of the allegations in the plaint allege the instrument to be void and no cancellation is required and without seeking such cancellation the relief of declaration pertaining to tenancy rights with regard to the agricultural land in question can be obtained by the plaintiff, only the revenue courts would have jurisdiction to deal with the subject matter of the suit and consequently the jurisdiction of civil courts would be barred. However, if the allegations made in the plaint make out a case of document being voidable, relief of cancellation of such a voidable document can only be granted by civil court and irrespective of the fact that the instrument pertains to agricultural land, the suit would not be barred under Section 207 of the Tenancy Act. Therefore, the trial court in each case, where a issue in this regard is raised, based on the stage of the suit i.e. either based on the plaint averments or the evidence available on record would have to come to a conclusion as to whether the facts as alleged, if established or as established in a case where evidence has been led makes the instrument void or voidable and decide accordingly.*
>
> *The fact that even in a case of a void document a relief of declaration in this regard has been sought, as laid down in the case of Rukmani (supra) once the declaration about status of Tenancy rights is granted, the consequential relief to the effect that the instrument in question is void and ineffective can always be granted by the revenue court.*

67. इस प्रकार उपरोक्त न्यायिक दृष्टांतों के अवलोकन से विवादित संपति पर खातेदारी अधिकार निहित होने व विवादित संपति का पंजीकृत दस्तावेज द्वारा अंतरण किए जाने की स्थिति में राजस्व न्यायालय व सिविल न्यायालय के क्षेत्राधिकार के मध्य संशय की स्थिति को स्पष्ट करते हुए निम्न प्रकार कानूनन स्थिति स्पष्ट की गई हैः–

1. *पंजीकृत दस्तावेज के आरंभ से शून्य होने की स्थिति में राजस्व न्यायालय से अनुतोष प्राप्त किया जा सकता है। साथ ही पंजीकृत दस्तावेज के शून्यकरणीय होने की स्थिति में केवल सिविल न्यायालय का क्षेत्राधिकार होता है।*

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

2. *अगर वादपत्र में विवादित संपति के अंतरण के पंजीकृत दस्तावेज को निरस्त करवाने का मुख्य अनुतोष है तथा अन्य अनुतोष आनुषांगिक है उस स्थिति में केवल सिविल न्यायालय का क्षेत्राधिकार होता है।*
3. *अगर वादपत्र में विवादित संपति पर खातेदारी अधिकार की घोषणा का अनुतोष मुख्य अनुतोष है तथा विवादित संपति के अंतरण के पंजीकृत दस्तावेज को निरस्त करवाने का आनुषांगिक अनुतोष है उस स्थिति में केवल राजस्व न्यायालय का क्षेत्राधिकार होता है।*

68. इसी प्रकार माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा सिविल अपील संख्या 1269—1270 / 2019 बउनवान ***Pyarelal vs Shubhendra Pilania (Minor)*** में दिनांक 29. 01.2019 को दिये गये निर्णय में पंजीकृत दस्तावेज के शून्य व शून्यकरणीय होने के आधार पर सिविल न्यायालय एवं राजस्व न्यायालय के क्षेत्राधिकार के विवाद के संबंध में विवेचना की है। जिसके प्रासंगिक पैरा का उद्धरण निम्न प्रकार हैः—

11 Section 9 of the Code of Civil Procedure provides thus:

> *"9. Courts to try all civil suits unless barred - The Courts shall (subject to the provisions herein contained) have jurisdiction to try all suits of a civil nature excepting suits of which their cognizance is either expressly or impliedly barred.*
> *Explanation I - A suit in which the right to property or to an office is contested is a suit of a civil nature, notwithstanding that such right may depend entirely on the decision of questions as to religious rites or ceremonies.*
> *Explanation ll - For the purposes of this section, it is immaterial whether or not any fees are attached to the office referred to in Explanation I or whether or not such office is attached to a particular place." Section 9 empowers civil courts to try all suits of a civil nature unless expressly or impliedly barred by any statute.*

12 Section 256 of the Tenancy Act provides thus:

> *"256. Bar to jurisdiction of civil courts — (i) Save as otherwise provided specifically by or under this Act, no suit or proceeding shall lie in any civil court with respect to any matter arising under this Act or the rules made thereunder, for which a remedy by way of suit, application, appeal or otherwise is provided therein.*
> *(2) Save as aforesaid no order passed by the State Government or by any revenue court or*

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

> *officer in exercise of the powers conferred by this Act or the rules made thereunder, shall be liable to be questioned in any civil court." Section 256 bars the jurisdiction of civil courts, save as otherwise provided under the Tenancy Act. Civil courts are expressly barred from trying a suit or proceeding with respect to matters arising under the Tenancy Act or rules made under it for which a remedy by way of a suit, application, appeal or otherwise is provided in the Tenancy Act.*

13 Section 207 of the Tenancy Act provides thus:

> *"207. Suits and applications cognizable by revenue court only— (1) All suits and applications of the nature specified in the Third Schedule shall be heard and determined by a revenue court.*
> *(2) No court other than a revenue court shall take cognizance of any such suit or application or of any suit or application based on a cause of action in respect of which any relief could be obtained by means of any such suit or application.*
> *Explanation.— If the cause of action is one in respect of which relief might be granted by the revenue court, it is immaterial that the relief asked for from the civil court is greater than, or additional to, or is not identical with, that which the revenue court could have granted." Section 207 of the Tenancy Act states that no court other than a revenue court shall take cognizance of suits and applications of the nature specified in the Third Schedule. Such suits can be heard and determined by a revenue court which has exclusive jurisdiction. The explanation clarifies that if the cause of action is one in respect of which relief may be granted by the revenue court, then it is immaterial that a relief sought from the civil court is greater than, in addition to or not identical to the relief sought from the revenue court. Where a suit is of a nature specified in any of the provisions of the Third Schedule, the bar under Section 256 is attracted and the revenue courts have exclusive jurisdiction to try the suit.*

14 In Bank of Baroda v Moti Bhai4, a two judge Bench of this Court dealt with the question of jurisdiction under Sections 207 and 256 of the Tenancy Act. A bank had sanctioned a demand loan facility to the respondent for which the respondent executed a promissory note and a

Signature Not Verified

Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

simple mortgage in favour of the bank. On his failure to repay the loan, the Bank instituted a suit in the civil court for recovery. The respondent raised a preliminary objection that the suit was essentially one for enforcing the mortgage and that the revenue court had the exclusive jurisdiction to entertain the suit by reason of the provisions contained in the Tenancy Act. The Trial court dismissed the objection. Allowing the revision filed by the respondent, the High Court held that that the mortgage deed in respect of agricultural lands formed an essential part of the cause of action. Upon an analysis of Sections 207 and 256 of the Tenancy Act, a two judge Bench of this Court set aside the judgment of the High Court with the following reasons:

"5. A combined reading of these two sections would show that the jurisdiction of civil courts is barred only in respect of suits and applications of the nature specified in the Third Schedule to the Act and in respect of suits or applications based on a cause of action in respect of which any relief could be obtained by means of a suit or application of the nature specified in the Third Schedule. The civil court has no jurisdiction to entertain a suit or proceeding with respect to any matter arising under the Act or the Rules made thereunder, provided that a remedy by way of a suit, application or appeal or otherwise is provided in the Act.
A loan given by a Bank to an agriculturist, which is in the nature of a commercial transaction, is outside the contemplation of the Act and can, by no stretch of imagination, be said to be in respect of any matter arising under the Act… The business of the Bank, in so far as lending transactions are concerned, is not to lend moneys on mortgages but the business is to lend moneys.
8. On the question of jurisdiction, one must always have regard to the substance of the matter and not to the form of the suit. If the matter is approached from that point of view, it would be clear that, primarily and basically, the suit filed by the Bank is one for recovering the amount which is due to it from the respondents on the basis of the promissory note executed by respondent 1 and the guarantee given by respondents 2 and 3." (Emphasis supplied) Section 207 read with Section 256 of the Tenancy Act bars the jurisdiction of the civil courts in respect of suits and applications of the nature specified in the Third Schedule to the Act. The question before us is whether the relief claimed by the appellant can be granted exclusively by a revenue court under the provisions of the Tenancy Act.

15 Section 88 of the Tenancy Act provides thus:

> *"88. Suits for declaration of right:- (1) Any person claiming to be a tenant or a co-tenant may sue for a declaration that he is a tenant or*

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

for a declaration of his share in such joint tenancy.
(2) A tenant of Khudkasht may sue for a declaration that he is such a tenant.
(3) A sub-tenant may sue the person from whom he holds for declaration that he is a sub-tenant.
(4) A landholder other than a State Government may sue a person claiming to be a tenant or co-tenant of a holding or a tenant of Khudkasht or a sub-tenant for a declaration of the right of such person."

Sl. No. 5 of the Third Schedule provides thus:

"THE THIRD SCHEDULE Suits, Applications and Appeals under the Act (See Sections 207, 214, 215 & 217) S. Section Description of suit, application or Period of Time Proper Court/ No. of Act appeal limitation from Court Fees Officer which competent period to dispose begins to of run

"THE THIRD SCHEDULE
Suits, Applications and Appeals under the Act
(See Sections 207, 214, 215 & 217)

S.No.	Section of Act	Description of suit, application or appeal	Period of limitation	Time from which period begins to run	Proper Court Fees	Court/Officer competent to dispose of
5.	88	Suit for declaration of the plaintiffs right :- (i) as a tenant, or (ii) as a tenant of khudkasht, or (iii) as a sub-tenant, or (iv) for a share in a joint tenancy		None	One rupee	Assistant Collector

Sl. No. 5 in the Third Schedule read with Section 207 of the Tenancy Act stipulates that a suit for the declaration of a right provided in Section 88 would lie before a revenue court. In a suit where the relief sought for is the declaration of the right stipulated in Section 88, Sections 207 and 256 read with the Third Schedule bar the jurisdiction of civil courts and vest jurisdiction exclusively with a revenue court.

69. इस प्रकार उपरोक्त न्यायिक दृष्टांतों के अवलोकन से विवादित संपति पर खातेदारी अधिकार निहित होने व विवादित संपति का पंजीकृत दस्तावेज द्वारा अंतरण किए जाने की स्थिति में राजस्व न्यायालय व सिविल न्यायालय के क्षेत्राधिकार के मध्य संशय की स्थिति को स्पष्ट करते हुए निम्न प्रकार कानूनन स्थिति स्पष्ट की गई हैः—

1. राजस्व न्यायालय से विवादित संपति पर खातेदारी अधिकार की घोषणा प्राप्त करने के पश्चात ही विवादित संपति के

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

अंतरण के पंजीकृत दस्तावेज को निरस्त करवाने बाबत सिविल न्यायालय में अनुतोष प्राप्त किया जा सकता है।

70. इस प्रकार उपरोक्त न्यायिक दृष्टांत के अवलोकन से स्पष्ट है कि अगर वादपत्र में विवादित संपति पर खातेदारी अधिकार की घोषणा का अनुतोष मुख्य अनुतोष है तथा विवादित संपति के अंतरण के पंजीकृत दस्तावेज को निरस्त करवाने का आनुषांगिक अनुतोष है उस स्थिति में केवल राजस्व न्यायालय का क्षेत्राधिकार होता है। उक्त विधि की स्थिति के संबंध में प्रकरण के तथ्यों का विश्लेषण किया जाना अपेक्षित हैं। इस संबंध में वादीगण का अभिकथन है कि वादीगण के अनुतोष को प्रदान करने में राजस्व न्यायालय अधिकृत है। राजस्व न्यायालय द्वारा वादीगण को खातेदारी अधिकारों की घोषणा किये जाने के पश्चात पंजीकृत बयनामा दिनांक 30.08.2010 स्वतः ही आरंभ से शून्य, अवैध व निष्प्रभावी घोषित हो जाएगा। इस प्रकार का अनुतोष प्रदान करने हेतु राजस्व न्यायालय सक्षम हैं। वादीगण को पंजीकृत बयनामा दिनांक 30.08. 2010 को पृथक से सिविल न्यायालय में चुनौती देने की आवश्यकता नहीं है। वादीगण के उपरोक्त अभिकथनों के विपरीत प्रतिवादी संख्या 06—09 का अभिकथन है कि पंजीकृत बयनामा दिनांक 30.08.2010 को सिविल न्यायालय से निरस्त करवाये बिना वादीगण खातेदारी अधिकारों सहित किसी प्रकार का अनुतोष प्राप्त करने के अधिकारी नहीं है।

71. प्रकरण में उक्त तनकी संख्या 05 के विश्लेषण के लिए वाद पत्र का अवलोकन किया जाना अपेक्षित है। प्रकरण में वाद पत्र के अवलोकन से स्पष्ट है कि वादीगण का वादपत्र का मुख्य अनुतोष मुतनाजा आराजी पर वादीगण के खातेदारी अधिकारों के पूर्व से ही निहित होने के कारण वादीगण के हक में खातेदारी अधिकारों की घोषणा की जावे। वादीगण का इस संबंध में मुख्य आधार यह है कि प्रतिवादी संख्या 01 को वादी व प्रतिवादी संख्या 02 लगायत 04 के हिस्से का बेचान करने का अधिकार नही था। फिर भी प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा वादीगण के हक हिस्से की आराजी सहित समस्त संपति का पंजीकृत बयनामा दिनांक 30.08.2010 द्वारा अंतरण किया गया। इस प्रकार प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा वादी व प्रतिवादी संख्या 02 लगायत 04 के हक हिस्से की आराजी सहित समस्त संपति का पंजीकृत बयनामा दिनांक 30.08.2010 द्वारा किया गया अंतरण अधिकार से बाहर जाकर किया गया है। इस आधार पर पंजीकृत बयनामा दिनांक 30.08.2010 आरंभ से ही अधिकार से बाहर होने के कारण अवैध व निष्प्रभावी है। वादपत्र में वादीगण का आनुषांगिक अनुतोष पंजीकृत बयनामा दिनांक 30.08.2010 को आरंभ से शून्य, अवैध व निष्प्रभावी घोषित करवाना है।

72. उक्त अनुतोष को साबित करने का भार वादी के उपर है। प्रकरण में तनकी संख्या 01 व 02 वादी के पक्ष में साबित होने के कारण वादी पंजीकृत बयनामा दिनांक 30. 08.2010 को आरंभ से शून्य, अवैध व निष्प्रभावी घोषित करवाने में सफल रहे है। इस कारण तनकी संख्या 01 व 02 वादी के पक्ष में साबित होने के कारण परिणामस्वरूप तनकी संख्या 5 वादी के पक्ष में एवं प्रतिवादी संख्या 06—09 के विपक्ष में स्वीकार किया जाता है।

73. निष्कर्षतः पंजीकृत बयनामा दिनांक 30.08.2010 के द्वारा प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा अपने परिवार के कर्ता के रूप में परिवार की विधिक आवश्यकताओं के लिए सहदायिकी संपति का अंतरण किये जाने को उचित एवं विधिसंगत मानना न्यायालय उचित नहीं

Signature Not Verified

Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

समझता है। इस आधार पर वादी का पंजीकृत बयनामा दिनांक 30.08.2010 के द्वारा प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा अपने परिवार के कर्ता के रूप में परिवार की विधिक आवश्यकताओं के लिए अंतरित संपति के अंतरण से वादी का बाध्य नहीं होना न्यायालय उचित समझता है। इस आधार पर न्यायालय अपने विनम्र मत में वादी का पंजीकृत बयनामा दिनांक 30.08.2010 के द्वारा प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा अपने परिवार के कर्ता के रूप में परिवार की विधिक आवश्यकताओं के लिए अंतरित संपति में वादी का हक निहित होना पाता है। अतः

आदेश है कि

वादी का दावा बाबत इस्तकरारहक स्वीकार किया जाकर बयनामा दिनांक 30.08.2010 को आरंभ से शुन्य, अवैध व निष्प्रभावी मानते हुए मुतनाजा आराजी पर वादी को तेजा पुत्र आदू की पारिवारिक वंशावली के आधार पर तेजा के हिस्से से निरपेक्ष रहते हुए नियमानुसार हिस्से का खातेदार घोषित किया जाता है।

निर्णय की पृथक से पर्चा डिक्री तैयार की जाये।

आज 29.09.2025 को यह निर्णय मेरे द्वारा खुले न्यायालय में सुनाया जाकर हस्ताक्षर एवं मोहर युक्त जारी किया गया।

(केशव कुमार मीना आर.ए.एस)
सहायक कलक्टर
गुढामालानी—बाड़मेर

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

सत्यमेव जयते

न्यायालय
सहायक कलक्टर/उपखण्ड अधिकारी
गुढामालानी–बाड़मेर
(पीठासीन अधिकारी –केशव कुमार मीना आर.ए.एस.)

वाद संख्याः– 2010/00019 दर्ज तिथिः– 09.09.2010

1. मोहनलाल पुत्र श्री तेजाराम जाति विश्नोई निवासी आलपुरा तहसील गुड़ामालानी जिला बाड़मेर।

............................वादी

बनाम

1. तेजाराम पुत्र श्री आदूराम
2. लाधुराम पुत्र तेजाराम फोत के कायम मुकाम
   2/1 श्रवण पुत्र श्री लाधूराम
   2/2 कालूराम पुत्र श्री लाधूराम
   2/3 दिनेश पुत्र श्री लाधूराम
   2/4 श्रीमती राजीदेवी पत्नी श्री लाधूराम
3. भाखराराम पुत्र श्री तेजाराम
4. गंगाराम पुत्र श्री तेजाराम
5. श्रीमती शान्तिदेवी पत्नी श्री गंगाराम
   कौम विश्नोई निवासी आलपूरा तहसील गुड़ामालानी जिला बाड़मेर।
6. किशनाराम पुत्र जेताराम
7. पांचाराम पुत्र रामकेनराम फौत के कायम मुकाम
   7/1 मांगीलाल पुत्र पांचाराम
   7/2 अशोक पुत्र पांचाराम
   7/3 चूंकीदेवी पत्नी पांचाराम
   7/4 प्रमेश्वरी पत्नी पांचाराम
   कौम विश्नोई निवासी गुड़ामालानी
8. हुकमाराम पुत्र पोकरराम
   कौम विश्नोई निवासी आलपुरा तहसील गुड़ामालानी जिला बाड़मेर।
9. लाधूराम पुत्र हीराराम
   कौम विश्नोई निवासी गांवड़ी तहसील बागोड़ा जिला जालौर।
10. राजस्थान सरकार जरिये तहसीलदार गुडामालानी
11. शाखा प्रबंधक एसबीआई बैक कृषि विस्तार शाखा गुड़ामालानी।

..........................प्रतिवादी

Signature Not Verified

Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested

मोहनलाल बनाम तेजाराम
2010/00019
निर्णय दिनांकः–29.09.2025

उपस्थित अधिवक्ता
वादीः– श्री पूनमाराम विश्नोई
प्रतिवादीः–श्री रामजीवन विश्नोई

राजस्व वाद अन्तर्गत धारा–88, 188
राजस्थान काश्तकारी अधि0–1955

–:पर्चा डिक्रीः–

वादी का दावा बाबत इस्तकरारहक स्वीकार किया जाकर बयनामा दिनांक 30.08.2010 को आरंभ से शुन्य, अवैध व निष्प्रभावी मानते हुए मुतनाजा आराजी पर वादी को तेजा पुत्र आदू की पारिवारिक वंशावली के आधार पर तेजा के हिस्से से निरपेक्ष रहते हुए नियमानुसार हिस्से का खातेदार घोषित किया जाता है।

यह पर्चा–डिक्री पालनार्थ हेतु तहसीलदार गुड़ामालानी को भिजवाई जावें। आदेश जारी हो। पक्षकारान अपना–अपना खर्चा स्वयं वहन करेंगे।

यह पर्चा–डिक्री आज दिनांक 29.09.2025 को मेरे द्वारा लिखवाई जाकर हस्ताक्षर एवं मुहर युक्त जारी की जाकर खुले न्यायालय में सुनाई गई।

(केशव कुमार मीना आर.ए.एस)
सहायक कलक्टर
गुढामालानी–बाड़मेर

Signature Not Verified

Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.11.02 14:01:45 IST
Reason: SelfAttested